RNI क्र. 50309/85/पृष्ठ संख्या 44/प्रकाशन तिथि 1 अप्रैल 2026

अंक 475 अप्रैल 2026

चकमक

बाल विज्ञान पत्रिका

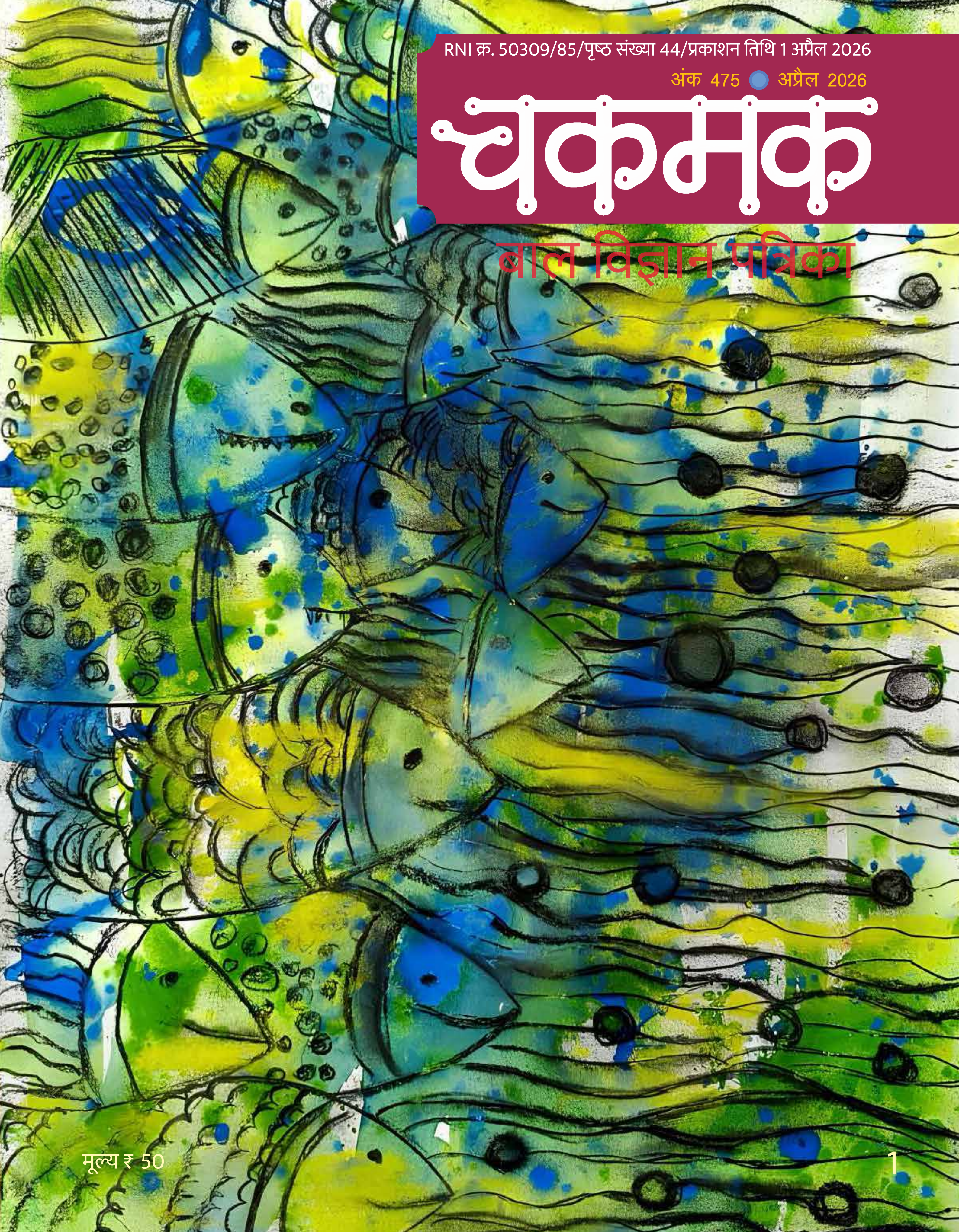

मूल्य ₹ 50

बातें फ़िल्मी

मकड़ी

निर्देशक: विशाल भारद्वाज
रिलीज: सन 2002

स्वस्तिका कुमारी
नौवीं, बाम्बूसा लाइब्रेरी,
तेज़ू, अरुणाचल प्रदेश

मैंने हाल ही में बच्चों की फिल्म *मकड़ी* (The Web of the Witch) देखी। मुझे यह बहुत पसन्द आई। जब मैंने इसे देखना शुरू किया, तो मुझे लगा कि यह कोई डरावनी फिल्म होगी। लेकिन यह तो बहुत मज़ेदार निकली।

यह फिल्म गाँव में रहने वाली जुड़वाँ बहनों चुन्नी और मुन्नी की कहानी है। चुन्नी बहादुर और साहसी है, जबकि मुन्नी शान्त और भले स्वभाव की है। चुन्नी काफी शरारती है और अक्सर गाँववालों के लिए परेशानियाँ खड़ी करती रहती है। उसका सबसे अच्छा दोस्त मुगल-ए-आज़म है।

गाँव में एक पुराना महल है, जिसे लोग भुतहा मानते हैं। गाँववालों का विश्वास है कि वहाँ भूत रहता है। लेकिन स्कूल में उनके शिक्षक उन्हें बताते हैं कि भूत-प्रेत जैसी कोई चीज़ नहीं होती। एक दिन खेलते-खेलते मुन्नी उस भुतहे महल में चली जाती है और फिर घर वापस नहीं लौटती। चुन्नी बहुत परेशान हो जाती है। वह ठान लेती है कि अपनी बहन को बचाकर रहेगी।

वह उस भुतहे महल में जाती है। वहाँ उसकी मुलाकात एक डायन से होती है। चुन्नी उससे अपनी बहन मुन्नी को छोड़ देने की विनती करती है। डायन कहती है, "अगर तुम्हें अपनी बहन चाहिए, तो मुझे सौ मुर्गियाँ लाकर दो। तभी मैं उसे फिर से इन्सान बना दूँगी।"

लौटने के बाद चुन्नी गाँववालों की मुर्गियाँ चुराने लगती है। लेकिन आगे क्या हुआ? क्या चुन्नी अपनी बहन को बचा पाई और उस डायन को हरा पाई?

मकड़ी को 2002 में सर्वश्रेष्ठ बाल फिल्म के लिए राष्ट्रपति पदक मिला था। श्वेता बसु प्रसाद ने चुन्नी और मुन्नी का शानदार अभिनय किया है और मुग़ल-ए-आज़म की भूमिका आलाप मजगांवकर ने निभाई है। शबाना आज़मी ने डरावनी डायन का किरदार निभाया है।

यह रोमांचक फिल्म यह सन्देश देती है कि भूत-प्रेत और डायन जैसी चीज़ें वास्तव में नहीं होतीं। अगर आप पूरी कहानी जानना चाहते हैं, तो आपको यह मज़ेदार फिल्म ज़रूर देखनी चाहिए।

अंक 475 अप्रैल 2026

चकमक

इस बार

फिल्मी बातें 2

खूबसूरत कप
जितेश शेल्के 4

सन्त रैदास के दोहे
सन्त रैदास 5

खिंद-खंदोल्हू
पवन चौहान 6

अन्तर ढूँढो 9

गणित है मज़ेदार - सओरा संख्याएँ
आलोका कान्हेरे 10

चित्रकला के इर्द-गिर्द - 2
सी. एन. सुब्रह्मण्यम् 14

क्यों-क्यों 16

चित्रपहेली 20

थिरकती दुनिया
मुक्ता अंजल 22

टॉइलेट का इतिहास
विनता विश्वनाथन 25

तुम भी बनाओ
रक्षिता सैनी 28

मेहमान जो कभी गए ही नहीं - भाग 20
आर एस रेश्मा राज, ए पी माधवन व साथी 30

एक्सरसाइज़ और मस्तिष्क 32

भूलभुलैया 33

माथापच्ची 34

मेरा पन्ना 36

तुम भी जानो 43

कौआ
डॉ. हर्षवर्धन कुमार 44

आवरण चित्र: मिवान कोठरी, पहली, बाल भवन बड़ौदा, गुजरात

सम्पादक
विनता विश्वनाथन
कनक शशि अनिल

सह सम्पादक
कविता तिवारी

विज्ञान सलाहकार
सुशील जोशी
उमा सुधीर

डिज़ाइन
कनक शशि अनिल

सलाहकार
सी एन सुब्रह्मण्यम्
शशि सबलोक

वितरण
झनक राम साहू

एक प्रति : ₹50

सदस्यता शुल्क
(रजिस्टर्ड डाक सहित)
वार्षिक : ₹ 800
दो साल : ₹ 1450
तीन साल : ₹ 2250

एकलव्य भोपाल के खाते में ऑनलाइन जमा करने के लिए विवरण:
बैंक का नाम व पता: स्टेट बैंक ऑफ इंडिया, महावीर नगर, भोपाल
खाता नम्बर: 10107770248
IFSC कोड: SBIN0003867
कृपया खाते में राशि डालने के बाद इसकी पूरी जानकारी accounts.pitara@eklavya.in पर ज़रूर दें।

फोन: +91 755 2977770 से 2 तक; ईमेल: chakmak@eklavya.in,
वेबसाइट: https://www.eklavya.in/magazine-activity/chakmak-magazine

खूबसूरत कप

जितेश शेल्के
चित्र: कनक शशि अनिल

वो लोग अब उस खूबसूरत कप को बाहर ही रखेंगे। उसका स्थान अब उसके जैसे दिखने वाले बाकी कपों के साथ नहीं रहा। उसे अब अन्दर नहीं रखा जाएगा। अब उसे अकेले रहने की आदत डालनी होगी या फिर उसके जैसे बाहर रखे जाने वाले बर्तनों के साथ रहने की।

सुबह का समय था। मैं किसी काम से एक परिचित के घर गया था। हमारी बातचीत चल रही थी। तभी दरवाज़े की घण्टी बजी। आवाज़ से लगा कि अधेड़ उम्र की कोई औरत है। पता चला कि वह बरसों से उनके मोहल्ले में कचरा इकट्ठा करने का काम कर रही थी। घर में सात साल की एक बच्ची भी थी। वह उसे जानती थी। इसलिए उससे बातचीत कर रही थी। बच्ची पहली मंज़िल पर थी और वह औरत गेट के बाहर बने चबूतरे पर बैठी थी।

कचरा लेने के बाद उस औरत ने बच्ची से चाय के लिए कहा। बच्ची अपनी माँ के पास गई और बोली, “दादी को चाय दे दीजिए।” मेरे लिए चाय बन ही रही थी, तो उन्होंने एक कप चाय और बढ़ा दी। बच्ची की माँ ने उसे बुलाया और कप थमाकर कहा, “जाओ, दे दो चाय।”

जाने बच्ची के मन में क्या आया कि वह कप लेकर अन्दर गई और फिर बाहर आकर उस औरत को चाय देने चली गई। उसकी चाय खत्म होने तक बच्ची नीचे ही थी।

बच्ची कप लेकर ऊपर आ ही रही थी कि उसकी माँ ने उसे टोका और पूछा, “अरे! यह कौन-सा कप लेकर आ रही हो? मैंने तो तुम्हें कोई और कप दिया था।”

बच्ची ने कहा, “मैंने वो बदल दिया। जो कप आपने दिया था उसकी किनोर टूटी हुई थी। तो मैंने सोचा कि मैं जिस खूबसूरत कप में चाय पीती हूँ, क्यों ना उसी में दे दूँ।” माँ ने उसके हाथ से कप छीना। उसे बाहर सीढ़ी पर रखा और बच्ची को अन्दर ले गईं। वहाँ उनके बीच क्या बातचीत हुई, मुझे नहीं पता। लेकिन मैं समझ गया कि मसला क्या है। क्या तुम समझे?

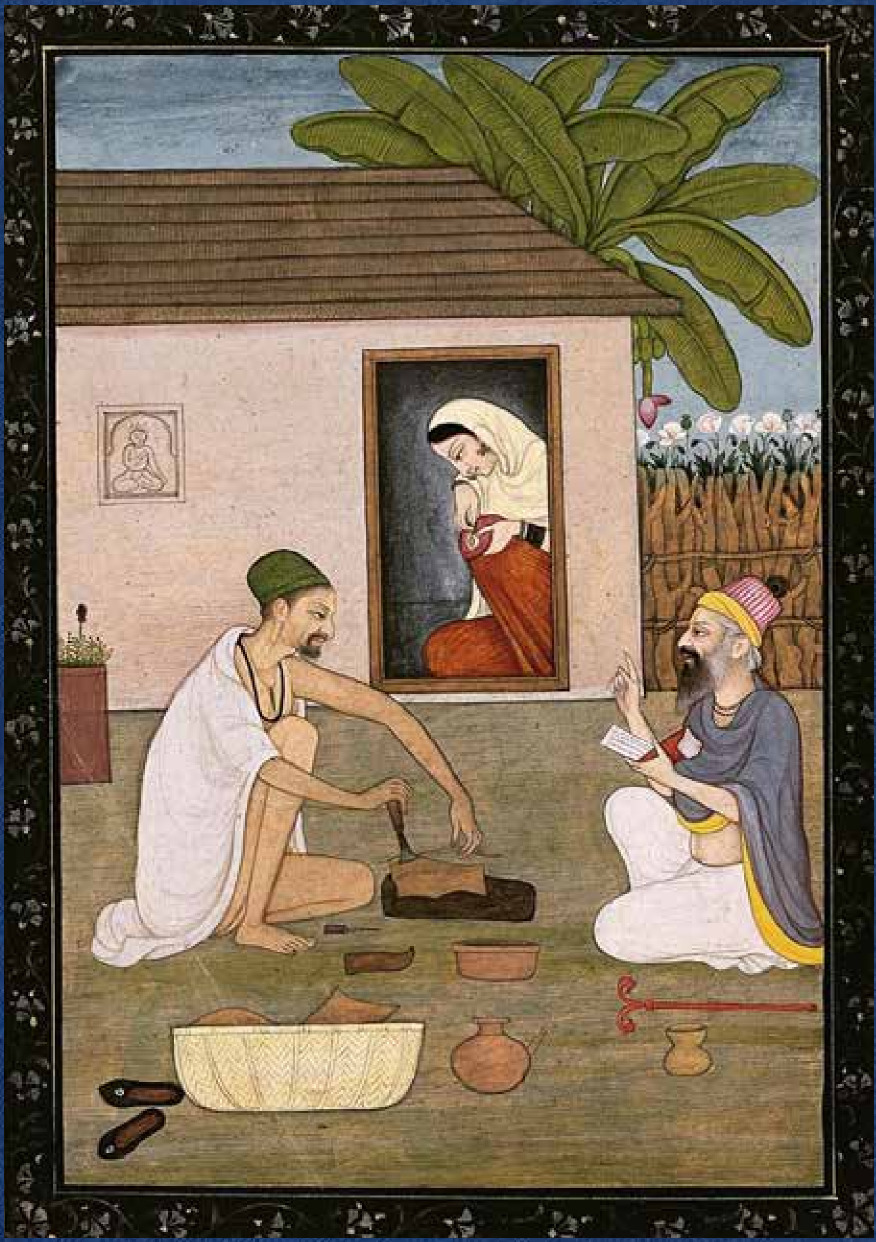

मोची के रूप में काम करते हुए सन्त रैदास, जिन्हें रविदास के नाम से भी जाना जाता है। यह फोलियो भक्ति आन्दोलन के सन्तों को दर्शाने वाली एक शृंखला का हिस्सा है। इसे लगभग 1800-1810 के बीच पहाड़ी क्षेत्र गुलर में मानकू और नैनसुख के बाद की पहली पीढ़ी के किसी कलाकार ने बनाया था।

सन्त रैदास के दोहे

रैदास इक ही बूंद सो, सब ही भयो वित्थार।
मुरखि हैं तो करत हैं, बरन अवरन विचार॥

जनम जात मत पूछिए, का जात अरू पात।
रैदास पूत सब प्रभु के, कोए नहिं जात कुजात॥

जात पांत के फेर मंहि, उरझि रहइ सब लोग।
मानुषता कूं खात हइ, रैदास जात कर रोग॥

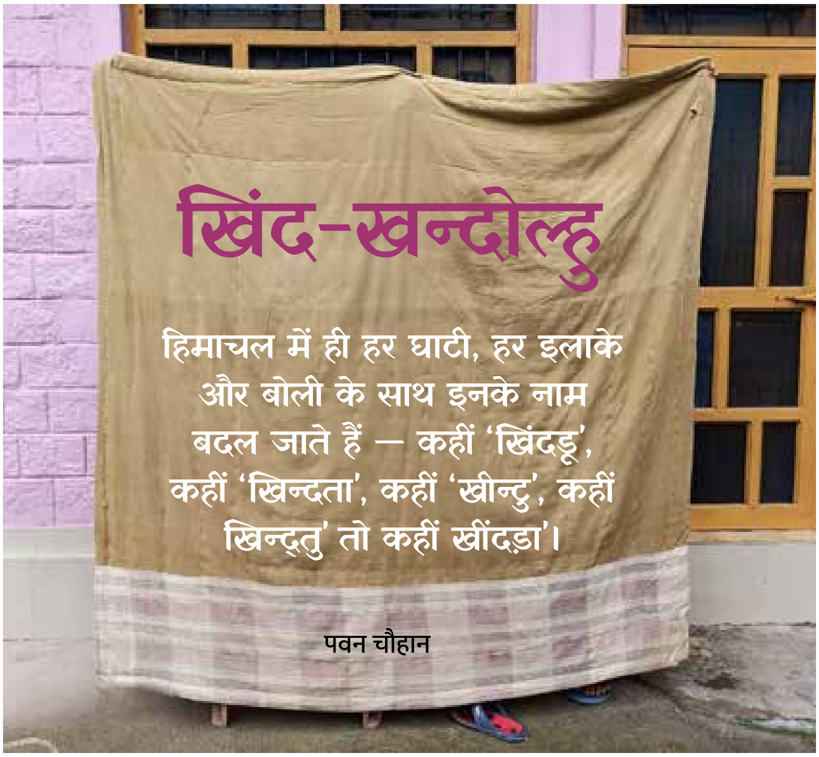

खिंद-खन्दोल्हु

हिमाचल में ही हर घाटी, हर इलाके और बोली के साथ इनके नाम बदल जाते हैं — कहीं 'खिंदडू', कहीं 'खिन्दता', कहीं 'खीन्दु', कहीं खिन्द्तु' तो कहीं खींदड़ा'।

पवन चौहान

सर्दियों की वे रातें आज भी स्मृति में ऐसे उतर आती हैं जैसे कल ही की बात हो। बाहर बर्फ़ीली हवा पहाड़ों से उतरकर घर की दीवारों से टकराती थी और भीतर हम सब खिंद और खन्दोल्हु में दुबके पड़े रहते थे। तब न रूम-हीटर थे, न ही बाज़ार वाली रज़ाइयाँ। अगर कुछ था, तो केवल पुराने कपड़ों से बने मोटे से खिंद और खन्दोल्हु। ये खिंद और खन्दोल्हु न केवल देह को ताप देते थे, बल्कि मन को सुकून भी पहुँचाते थे।

दिन भर खिंद-खन्दोल्हु 'बिलंगण' पर टँगे-टँगे धूप खाते और गरम हो जाते। बिलंगण छत की कड़ियों से बँधी लकड़ी की शहतीर होती है। शाम ढलते ही माँ खिंद-खन्दोल्हू को बिलंगण से उतारतीं और झटकारतीं। फिर उन्हें धान के तनों और खजूर के पत्तों से बनी मांजरी (चटाई) के ऊपर सलीके से बिछा देतीं। खन्दोल्हु बिछाने के काम आता और खिंद ओढ़ने के। खिंद आकार में खन्दोल्हू से बड़ा होता है। खिंद और खन्दोल्हू के बीच दुबककर हमें ऐसा लगता था जैसे धरती और आकाश के बीच ठण्ड से सुरक्षित एक संसार रच दिया गया हो।

खिंद-खन्दोल्हू किसी एक कपड़े से नहीं बनते थे। यह कपड़ों की कई परतों से बने होते थे। इसमें दादा के फटे-पुराने कुर्ते, दादी के पुराने फीके पड़ चुके दुपट्टे, पिता के पुराने कोट, माँ की फटी साड़ियों के पल्लू, भाई की छोटी पड़ चुकी कमीज़ और बहन की घिसी हुई फ्रॉक — सब शामिल होते थे। हर परत के भीतर कोई न कोई कहानी सिली हुई थी। शायद इसीलिए इनमें इतनी गहरी नींद आती थी।

चित्र 1. गर्माहट सहेजती परतों से बनता खिंद का आधार।

खिंद-खन्दोल्हु बनाना एक हुनर था। जब पुराने कपड़ों का ढेर बढ़ जाता, तो गाँव में 'ज्वारी' लगती यानी सब मिलकर काम करते। पड़ोस की औरतें, बूढ़ी अम्माएँ और कभी-कभी पुरुष भी इकट्ठा होते। कोई कपड़े फाड़ता, कोई तह लगाता, कोई मोटी सुई में धागा पिरोता। 'नगंदणे' (सिलना) के दौरान उँगलियाँ दुखतीं, पीठ झुक जाती। पर बातों की गर्मी और अपनेपन से सारी थकान पिघलती रहती।

कपड़ों को इस तरह फाड़ा जाता कि कोई बटन, कॉलर या चुभने वाला हिस्सा न रह जाए। ज़्यादा चौड़ाई वाले कपड़ों से आधार बनता। फिर उसके ऊपर परत दर परत कपड़े जमाए जाते। जब खिंद-खन्दोल्हु को पूरा आकार मिल जाता, तो ऊपर से एक साफ चद्दर जैसा कपड़ा सिल दिया जाता।

बड़े होकर पता चला कि खिंद-खन्दोल्हु को कई और नामों से भी जाना जाता है। हिमाचल में ही हर घाटी, हर इलाके और बोली के साथ इनके नाम बदल जाते हैं – कहीं 'खिंदडू', कहीं 'खिन्दता', कहीं 'खीन्टु', कहीं खिन्द्तु' तो कहीं खींदड़ा'। देश के अन्य हिस्सों में इसे 'वकेर', 'खेता', 'कथरी-कथोला', 'गुदड़ी', 'ऐज', 'खेंदा' आदि कहा जाता है। खैर नाम चाहे जो भी हों, उद्देश्य सबका एक ही था– ठण्ड से बचाव और जीवन को सहज बनाए रखना।

चित्र 2. मिल-जुलकर सिली परतों से आकार लेते खिंद-खन्दोल्हु।

पड़ोस की औरतें, बूढ़ी अम्माएँ और कभी-कभी पुरुष भी इकट्ठा होते। कोई कपड़े फाड़ता, कोई तह लगाता, कोई मोटी सुई में धागा पिरोता। 'नगांदणे' (सिलना) के दौरान उँगलियाँ दुखतीं, पीठ झुक जाती। पर बातों की गर्मी और अपनेपन से सारी थकान पिघलती रहती।

इनकी धुलाई की भी अपनी ही अलग कहानी है। महीनों तक इस्तेमाल करने के बाद जब खिंद-खन्दोल्हु मैले और भारी हो जाते, तो उसे धोने की हिम्मत जुटानी पड़ती। डिटर्जेंट या रीठा मिले पानी में इन्हें कई दिनों तक भिगोया जाता। अगर यह चीज़ें भी नहीं होतीं, तो बुज़ुर्गों की शानदार तरकीब काम आती। तब इन्हें पशुशाला में बिछा दिया जाता और फिर गोबर व गौमूत्र वही काम कर देते, जो आज रसायन करते हैं।

इस धुलाई में खूब पानी लगता। इसलिए इन्हें अपने कन्धों, किसी अन्य साधन या फिर भैंस या कट्टू की पीठ पर लादकर खड्ड की ओर ले जाया जाता। साफ बहते पानी में उन्हें मरोड़ा-पीटा और धोया जाता। इसमें सबसे ज़्यादा मज़ा हम बच्चों को आता। हम इनके ऊपर उछल-कूदकर सारा मैल निकाल देते। इस मण्डाई से ये चमक उठते। फिर पत्थरों पर फैलाकर धूप में इन्हें सुखाया जाता। शाम तक खिंद-खन्दोल्हु हल्के और ताज़े हो जाते, जैसे उन्हें नया जीवन मिल गया हो। कुछ दिनों तक कड़ी धूप में सूखने के बाद उन्हें दोबारा इस्तेमाल में लाया जाता।

रात को जब हम उसमें दुबकते, तो बाहर की ठण्ड बेबस हो जाती। बुज़ुर्ग कहते थे कि खिंद-खन्दोल्हु सर्दी में गर्म और गर्मी में ठण्डे रहते हैं। और ऐसा सच में होता है। बस, इसे महसूस करने की ज़रूरत है।

उस समय तक हमारे इलाके में संयुक्त परिवार बचे हुए थे। हर घर में बच्चों की संख्या भी खूब होती थी। रात होते ही हम सभी बच्चे अपने-अपने हिसाब से खिंदों में दुबक जाते। यह जगह मिट्टी के घर का कोई खुला कमरा या बरामदा होता।

उन रातों में सोना किसी उत्सव से कम नहीं होता था। इसका मुख्य कारण था लोककथाओं को सुनना-सुनाना और हँसी-मज़ाक के पलों को जीना। अपने हमउम्रों और छोटों के बीच बड़ों-बुज़ुर्गों का साथ हर रात को बेहद खूबसूरत और सुरक्षित बना देता था। उन रातों का वह अपनापन आज भी यादों में उतरकर दिल को धीरे-से गुदगुदा जाता है।

आज घरों में गद्दे हैं, मुलायम रज़ाइयाँ हैं। कई तरह की अन्य सुविधाएँ हैं। खिंद-खन्दोल्हु अब शायद ही ओढ़े जाते हों, पर उनकी गर्माहट आज भी स्मृतियों में वैसी ही बनी हुई है।

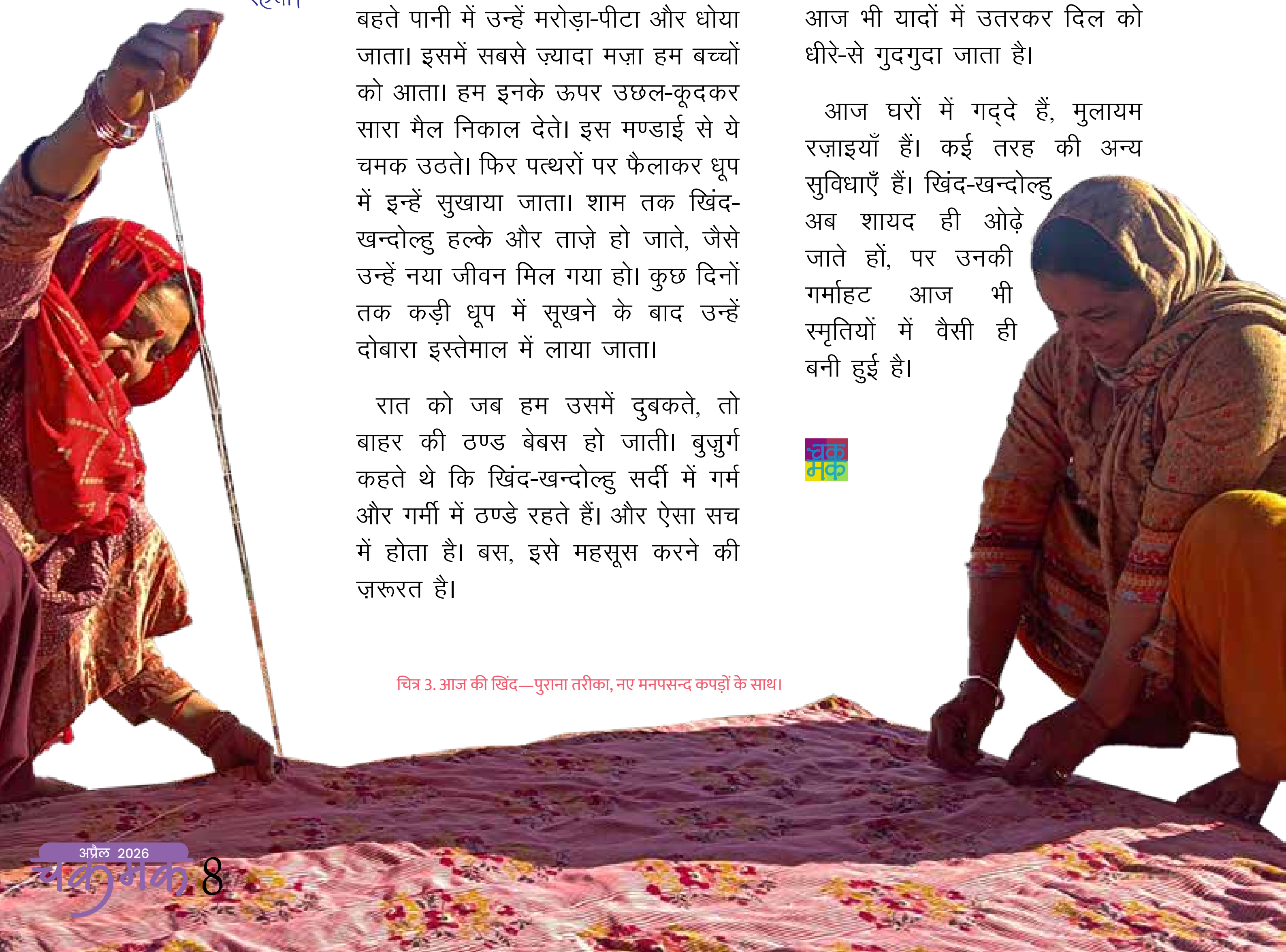

चित्र 3. आज की खिंद—पुराना तरीका, नए मनपसन्द कपड़ों के साथ।

अन्तर ढूँढो

एक जैसे दिखने वाले इन दोनों चित्रों में दस अन्तर हैं, तुमने कितने ढूँढे?

चित्र: तथागत, यूकेजी, आई पी मेमोरियल स्कूल, हावड़ा, पश्चिम बंगाल

सओरा संख्याएँ

आलोका कान्हेरे
चित्र: मधुश्री
अनुवाद: कविता तिवारी

तुम जानते ही होगे कि

अलग-अलग भाषाएँ बोलने वाले लोग संख्याओं के लिए अलग-अलग नाम इस्तेमाल करते हैं।

जैसे 'दस' को अँग्रेज़ी में टेन कहते हैं और मराठी में दहा। केवल नाम ही नहीं, बल्कि संख्याओं को देखने का उनका 'नज़रिया' भी अलग होता है।

जैसे कि अँग्रेज़ी में 39 को थर्टी नाइन कहा जाता है। इसका मतलब तीस और नौ होता है। जबकि हिन्दी में 39 को उनतालीस (या उनचालीस भी) कहते हैं।

इसका मतलब होता है चालीस से एक कम। मराठी में भी 39 को एकोणचालीस कहा जाता है। इसका मतलब भी चालीस से एक कम होता है। क्या तुम किन्हीं और भाषाओं में संख्याओं के नाम जानते हो?

आज हम एक ऐसी भाषा में

संख्या-नामों (number names) के बारे में जानेंगे जिसे अधिकांश लोग नहीं जानते।

वह भाषा है —**सओरा।**

सओरा भाषा उड़ीसा में रहने वाले सओरा लोगों द्वारा बोली जाती है। सओरा लोग उड़ीसा के गजपति ज़िले के वनीय इलाकों में रहते हैं।

39 यागी तीनजी ?

2011 की जनगणना के अनुसार गजपति ज़िले में सओरा लोगों की कुल आबादी तीन लाख के करीब है। पारम्परिक रूप से ये लोग मिट्टी या पत्थर से बने छोटे-छोटे घरों में रहते हैं। इन घरों की छत नीची होती है और छप्पर की बनी होती है। इनकी बाहरी दीवारों पर सुन्दर पेंटिंग्स बनी होती हैं।

सओरा भाषा में शून्य से लेकर बारह तक तेरह बुनियादी संख्याएँ होती हैं। इनके नाम इस प्रकार हैं:

संख्या	नाम
0	आरीबा
1	आबय/बयो
2	बागू
3	यागी
4	उनजी
5	मलय
6	तुरु
7	गुलजी
8	तनजी
9	तीनजी
10	गलजी
11	गलमुए
12	मिगल

जानने के लिए आगे पढ़ो !

इन्हें ज़ोर-ज़ोर से बोलकर पढ़ने की प्रैक्टिस करो।

3 से 19 के बीच के संख्या-नामों को बनाने का नियम यह है कि आवश्यक संख्या को पाने के लिए मिगल (यानी 12) में एक छोटी संख्या जोड़ी जाती है। यानी कि 13 से 19 तक की संख्याओं के लिए मिगल बुनियादी इकाई होती है।

उदाहरण के लिए

संख्या 13, संख्या 12 व 1 को जोड़ने से बनती है।

मतलब 13 = मिगलाबयो [मिगल (12) + बयो (1)]।

संख्या 14, संख्या 12 व 2 को जोड़ने से बनती है तो

मतलब 14 = मिगलबागू [मिगल (12) + बागू (2)]।

19 (मिगलगुलजी [12 + 7])

तक की बाकी संख्याओं को भी इसी तरह नाम दिए गए हैं।

सओरा भाषा में 15, 16, 17 व 18 के लिए संख्या-नाम लिखकर देखो।

19 के बाद बुनियादी इकाई होती है कुडी। इसका मतलब 20 होता है।

20 से बड़ी संख्याओं के संख्या-नामों के लिए कुडी का इस्तेमाल किया जाता है।

उदाहरण के लिए,

21 = कुडीआबय (यानी कि 20 और 1)

29 = कुडीतीनजी (यानी कि 20 और 9)।

30 = कुडीगलजी (20 और 10)

40 के लिए बाकुडी (2 गुना 20) का इस्तेमाल करते हैं।

तुम्हें क्या लगता है 39 को सओरा लोग क्या कहते होंगे? 52 को? और 55 को?

100 के लिए सओरा भाषा का शब्द है बसवा।

1000 = बमाडिं और 2000 = बागुमाडिं।

इसी तरह 4000 = उनजीमाडिं (4 गुना 1000)।

हम जानते हैं कि 'मिगलबागू' यानी 12 और 2। यहाँ 12, 2 से बड़ा है और पहले बोला गया है, इसलिए दोनों के संख्या-नामों को जोड़कर मिगलबागू कहा जाता है। लेकिन 'बाकुडी' में 2, 20 से छोटा है, इसलिए संख्या-नामों को गुणा करके बाकुडी कहा जाता है।

हिन्दी के संख्या-नामों में भी यही पैटर्न देखने को मिलता है। उदाहरण के लिए: जब हम 'एक सौ पैंतालीस' कहते हैं तो यहाँ पर बड़ी संख्या 100 है और छोटी संख्या 45 है। इसलिए हम इनके संख्या-नामों को जोड़ते हुए कहते हैं।

पर जब 'दो सौ दस' कहते हैं तो यहाँ पर 2 छोटी संख्या है और 100 बड़ी संख्या है। इसलिए हम इनके संख्या-नामों को गुणा करके कहते हैं।

दिलचस्प है ना? अब पता करो कि सओरा भाषा में इन संख्याओं को क्या कहते होंगे?

1. बाईस (22)
2. साठ (60)
3. एक सौ पैंसठ (165)
4. पाँच हज़ार (5000)

इस लेख को लिखने के लिए मैं उड़ीसा के अभय कुमार कर और डमरु सओरा का शुक्रिया अदा करना चाहूँगी। उनकी मदद से मैं सओरा भाषा में संख्या-नामों का सही उच्चारण समझ पाई।

फोटो: सुनील दामन - Own work, CC BY-SA 4.0, https://commons.wikimedia.org/w/index.php?curid=82172284

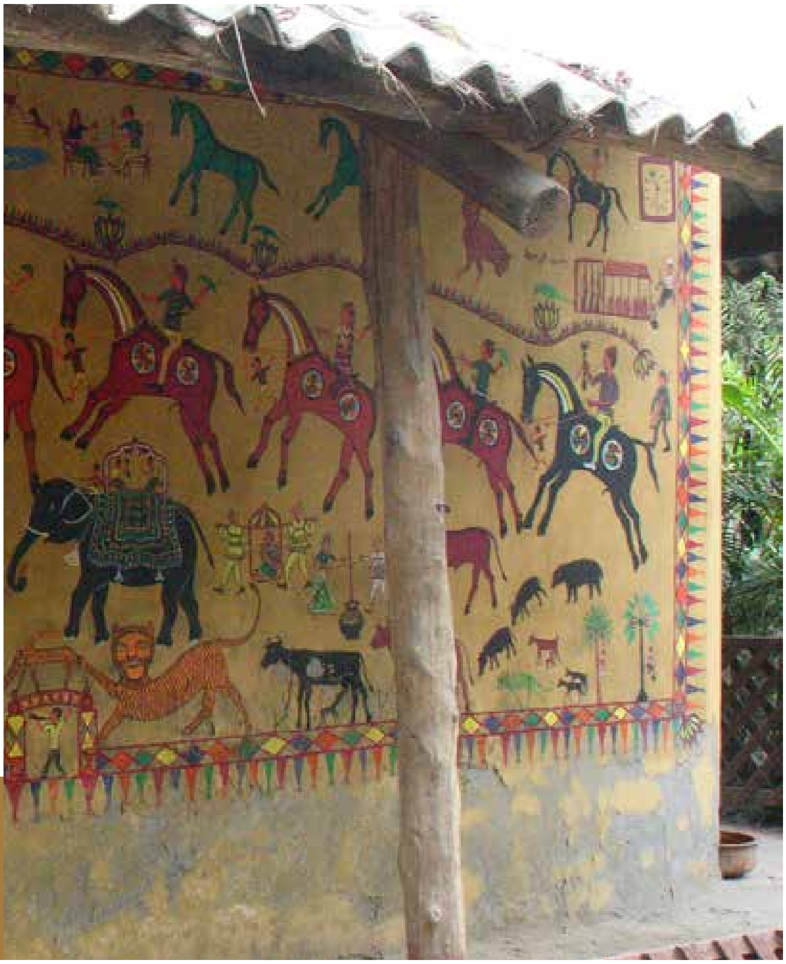

फोटो: अनिल भारद्वाज, नोएडा - CC BY-SA 3.0 <https://creativecommons.org/licenses/by-sa/3.0>, via Wikimedia Commons

चित्रकला के इर्दगिर्द -2

सी.एन. सुब्रह्मण्यम्

फरवरी के अंक में हमने बात यहाँ छोड़ी थी कि जंगली जानवरों का शिकार करके पेट भरने वाले गुफा मानव आखिर गुफाओं की दीवार पर चित्र क्यों बनाते थे? शायद तुमने इस सवाल पर कुछ सोच-विचार किया होगा।

चित्र तो हम आज भी बनाते हैं और बनते देखते हैं। अलग-अलग तरह के चित्रों को बनाने के उद्देश्य भी अलग होते हैं। जैसे कुछ चित्र व्यक्तियों के होते हैं। ऐसे चित्र शायद इसलिए बनाए जाते हैं कि उन व्यक्तियों की याद बनी रहे। कुछ चित्र धार्मिक उपयोग के लिए बनाए जाते हैं। कुछ चित्र घरों की दीवार को सजाने के लिए बनाए जाते हैं, तो कुछ विचारों और अनुभवों को व्यक्त करने के लिए। ऐसे कई और उद्देश्य भी हो सकते हैं।

फोटो: अनिल भारद्वाज, नोएडा - CC BY-SA 3.0 <https://creativecommons.org/licenses/by-sa/3.0>, via Wikimedia Commons

फोटो: बर्नार्ड गान्योन - Own work, CC BY-SA 3.0, https://commons.wikimedia.org/w/index.php?curid=33749834

हज़ारों साल पहले गुफा मानव चित्र क्यों बनाते थे, इसके बारे में ठीक-ठीक कुछ कहना मुश्किल है। हाँ, चित्रों को देखकर अनुमान ज़रूर लगा सकते हैं।

भैंसे के चित्र को देखो। उसके शरीर पर तीन घाव दिखाए गए हैं जो शायद तीर या भाले से बने हैं। ऐसा चित्र बनाने के पीछे क्या मंशा रही होगी? शायद ये कि यदि चित्र में जानवर को घायल कर दें, तो वास्तव में शिकार करने पर वह जानवर आसानी से घायल हो जाएगा। इसका ये मतलब भी हो सकता है कि शायद गुफा मानव मानते थे कि चित्रों पर जादू-टोना करके वे जानवरों पर काबू पा सकते हैं।

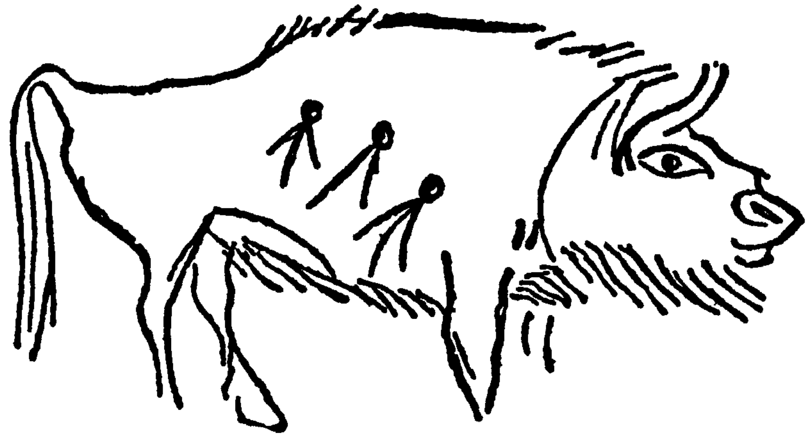

फोटो: रमेश लालवानी - https://www.flickr.com/photos/ramesh_lalwani/6860069872/, CC BY 2.0, https://commons.wikimedia.org/w/index.php?curid=93001564

ये चित्र देखो। इसमें एक आदमी किसी सींगवाले जानवर का मुखौटा पहने है। उसकी पीठ और पूँछ घोड़े जैसी है और वह नाच रहा है। ये चित्र मानव और जानवर के घनिष्ठ सम्बन्ध को दर्शाता है और ये चित्र हमारे लिए इतना अपरिचित भी नहीं है। आज भी त्यौहारों तथा परम्परागत उत्सवों में बन्दर, बैल, शेर आदि के मुखौटे लगाकर नाचते हैं।

हम कह सकते हैं कि वास्तव में चित्रकला लोगों के दैनिक जीवन और मान्यताओं से गहराई से जुड़ी थी। वे केवल अपनी गुफाओं की शोभा बढ़ाने या मनोरंजन के लिए चित्र नहीं बनाते थे।

क्यों क्यों

क्यों-क्यों में इस बार का हमारा सवाल था:
ज्ञान/सीखने को जाँचने के एकमात्र तरीका आम तौर पर परीक्षा को माना जाता है। यह सही है याा गलत? तुम इस बारे में क्या सोचते हो, और क्यों?

कई बच्चों ने हमें दिलचस्प जवाब भेजे हैं। इनमें से कुछ तुम यहाँ पढ़ सकते हो।

अगले अंक का सवाल है:
**कुछ लोग मानते हैं कि कुछ स्थितियों में युद्ध ज़रूरी हो जाता है, जबकि कुछ अन्य लोग मानते हैं कि किसी भी स्थिति में युद्ध ठीक नहीं होता।
तुम्हें क्या लगता है—किन परिस्थितियों में युद्ध करना सही हो सकता है, और किन में नहीं? क्यों?**

तुम भी अपने जवाब हमें भेजना। जवाब तुम लिखकर या चित्र/कॉमिक बनाकर दे सकते हो।

अपने जवाब तुम हमें merapanna.chakmak@eklavya.in पर ईमेल कर सकते हो या फिर 9753011077 पर व्हॉट्सऐप भी कर सकते हो। चाहो तो डाक से भी भेज सकते हो। हमारा पता है:

चकमक
एकलव्य फाउंडेशन,
जमनालाल बजाज परिसर,
जाटखेड़ी, फॉर्चून कस्तूरी के पास,
भोपाल - 462026, मध्य प्रदेश

पारलिंगी (ट्रांसजेंडर) व्यक्ति को अन्दर से लगता है कि मैं लड़की हूँ। पारलिंगी व्यक्ति को समाज में ठुकराया जाता है। उन लोगों की क्या गलती है कि समाज उनको ठुकराता है। उन लोगों को आज़ादी चाहिए। उन लोगों का शरीर आदमी जैसा है या स्त्री जैसा, क्या फर्क पड़ता है। उनमें भी इन्सानियत है। हमें जब वे मन्दिर में मिलते हैं तो हम उनका आशीर्वाद लेते हैं और जब रास्ते में मिलते हैं तो उन्हें ठुकराते हैं।

सिया बोबडे, पाँचवीं, प्रगत शिक्षण संस्थान, फलटण, महाराष्ट्र

चित्र: कविता कोर्राम, तीसरी, प्राथमिक शाला, कुरोपारा, उदयपुर, सरगुजा, छत्तीसगढ़

हर बच्चा और बड़ा अलग होता है। कोई लम्बा होता है, कोई छोटा। कोई तेज़ बोलता है, कोई धीरे। कुछ लोग अलग कपड़े पहनते हैं। कुछ अलग खाना खाते हैं। सबकी आदतें अलग होती हैं। अलग होना अच्छा है। इससे दुनिया रंग-बिरंगी बनती है। हमें सबको प्यार से देखना चाहिए और सबका सम्मान करना चाहिए।

कौशिका बी. पाँचवीं, रमणा विद्यालय, महिन्द्रा वर्ल्ड सिटी, चंगलपेट, तमिलनाडु

कुछ लोग शारीरिक रूप से अलग दिखते हैं। किसी को कुछ तकलीफ होती है। किसी का पैर टूट गया होता है। किसी को पैर टूटने के कारण व्हीलचेयर पर बैठना पड़े तो हम उसकी मदद कर सकते हैं। जैसे व्हीलचेयर धकाकर उनको उस जगह पर ले जा सकते हैं जहाँ उन्हें जाना हो। इसी तरह कुछ लोग अलग ढंग से रहना पसन्द करते हैं। जैसे कुछ लड़कियों को लड़कों जैसे रहना पसन्द होता है और कुछ लड़कों को लड़कियों जैसे। मैं सोचती हूँ कि उन्हें अपना जीवन अलग ढंग से जीना पसन्द है तो हम उनका मज़ाक क्यों बनाएँ? बल्कि हमें उन्हें गलत ढंग से नहीं देखना चाहिए क्योंकि वे भी तो इन्सान हैं।

अंशिका कड़ोपे, पाँचवीं, शिक्षा प्रोत्साहन केन्द्र भातना, शाहपुर, बैतूल, मध्य प्रदेश

हमारे स्कूल में एक लड़का है। वो थोड़ा अलग है। उसके शरीर की बनावट भी अलग है। उसका शरीर तो पतला है पर सिर थोड़ा ज़्यादा बड़ा है। वो बहुत शान्त रहता है। न कोई सवाल पूछता है, न कोई जवाब देता है। टीचर भी उस पर ज़्यादा ध्यान नहीं देते। वो लड़का कक्षा में सोता रहता है। टीचर भी उसे कुछ नहीं कहते।

तो मैं ही एक दिन उससे पूछी, “तुम कक्षा में सोते क्यों रहते हो?” तो वो बिना कुछ कहे वहाँ से चला गया। मैं दूसरे दिन फिर पूछी, “तुम कुछ बोलते क्यों नहीं हो? कुछ बोला करो ताकि नींद न लगे। आखिर स्कूल पढ़ने आते हो, न कि सोने। और तुम इतना शान्त कैसे रह लेते हो?” तब वो लड़का बोला, “मुझे बोलना अच्छा नहीं लगता।” तब मैं बोली, “तो क्या सोना ही अच्छा लगता है?” तो वो बोला, “मैं घर पर भी कम ही बोलता हूँ।”

मैं सोच में पड़ गई कि आगे जाकर क्या होगा इस लड़के का। एक तो सिर बड़ा और शरीर पतला है। पढ़ता भी नहीं। बोलता भी नहीं। आखिर करेगा क्या?

काजल, नौवीं, स्वतंत्र तालीम, महमूदाबाद सेंटर, मलसराय, सीतापुर, उत्तर प्रदेश

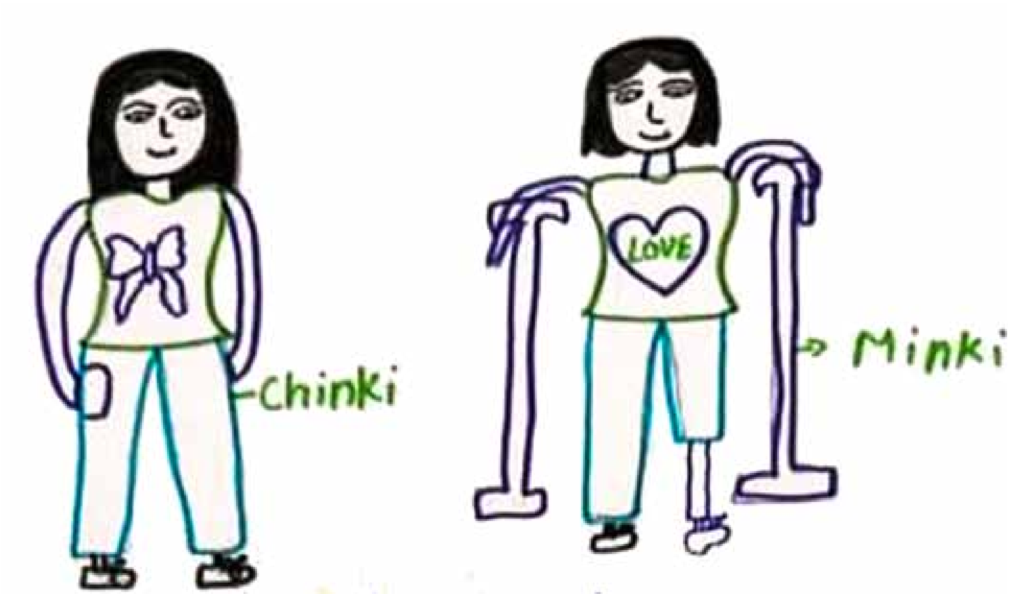

चित्र: अलका कुमारी, दसवीं, निरन्तर संस्था, दिल्ली

क्यों क्यों

मैं उन्हें सामान्य व्यक्ति की तरह देखती हूँ, न कि असहाय व्यक्ति की तरह। हम भले ही कहें कि हमें उनके प्रति सद्‌भावना रखनी चाहिए। लेकिन हम कभी भी उनकी भावनाओं को समझ नहीं पाएँगे। उनके जीवन का संघर्ष हमारे जीवन के संघर्ष से भिन्न है। मेरे अनुसार सहानुभूति जताना या असंवेदनशील व्यवहार करना दोनों ही उन्हें ठेस पहुँचाते हैं। उन्हें आम व्यक्ति की तरह देखना चाहिए।

झरना, नौवीं, अज़ीम प्रेमजी स्कूल, धमतरी, छत्तीसगढ़

मेरे घर तरफ एक आदमी है जिसका हाथ जल गया है। वो एक हाथ से पूरा काम करता है। एक और आदमी ऐसा है जिसके दोनों पैर नहीं हैं। वह हाथ से चलता है। मैं सोचती हूँ कि उसे चलने में कितना परेशानी होती होगी। मुझे उन्हे देखकर यह डर लगता है कि कहीं मेरे साथ भी ऐसा न हो जाए।

अल्पना लकड़ा, चौथी, शासकीय प्राथमिक शाला माझापारा, देवगढ़, सरगुजा, छत्तीसगढ़

चित्र: आयुष कुमार, आठवीं, परिवर्तन सेंटर, ग्राम नारायणपुर, सिवान, बिहार

मेरे मोहल्ले में एक आदमी रहता है। वह चल नहीं सकता। वह अपने एक पैर से सहारा लेता है। मैं उसे देखती हूँ तो मुझे उसके लिए बहुत बुरा लगता है। और वह मुझे दुकान भेजता है तो मैं सामान लेने जाती हूँ। वो बहुत अच्छा है। वो अपने घर के पास बैठता है तो मैं भी उसके पास जाकर बैठ जाती हूँ और मैं चलने में उसकी मदद करती हूँ।

गुंजन यादव, पाँचवीं, पी. एम. श्री शासकीय वीरांगना अवन्ती बाई लोधी प्राथमिक शाला, चपरीद, रायपुर, छत्तीसगढ़

चेहरे से इन्सान की पहचान नहीं होती। हम एक ऐसे समाज में रहते हैं जहाँ लोग किसी व्यक्ति के व्यक्तित्व को उसकी बाहरी बनावट से परखते हैं। लोगों का मानना है कि सुन्दर इन्सान सुशील भी होता है। लेकिन ऐसी मान्यता कई बार उलटी निकलती है। क्योंकि अक्सर व्यक्ति का सामाजिक स्तर ही उनके व्यक्तित्व को परखने का आधार बन जाता है। अमीर व्यक्ति को बड़े दिलवाला माना जाता है, तो गरीबों को कंजूस। लोग सोचते हैं कि बाहर से खुश दिखनेवाले व्यक्ति का दिल भी सुखी रहता है। मैं भी लोगों को उनके शारीरिक रूप से परखती थी। फिर मैंने यह सबक सीखा कि खूबसूरत व्यक्ति अशिष्ट हो सकता है और बदसूरत व्यक्ति सुशील। खुशमिज़ाज भी अन्दर ही अन्दर दुखी हो सकता है। हर चमकती चीज़ सोना नहीं होती और किसी को भी उसके बाहरी स्वरूप से परखना गलत होता है।

तमन्ना भरतवाज, नौवीं, रमणा विद्यालय, शोलिंगनल्लूर, चेन्नई, तमिलनाडु

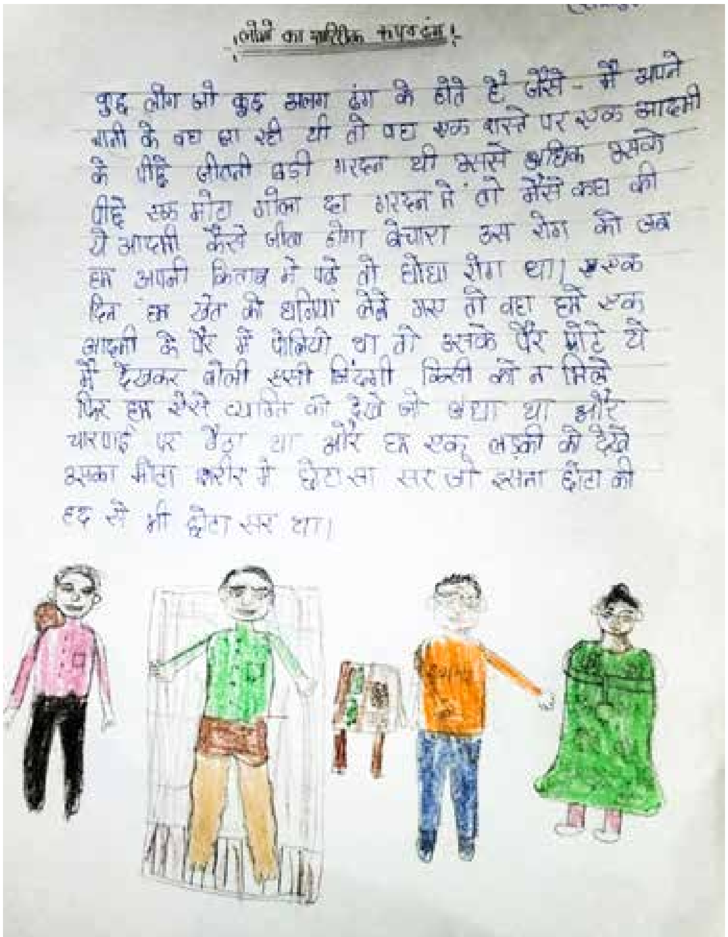

चित्र: पल्लवी, नौवीं, स्वतंत्र तालीम, महमूदाबाद सेंटर, मलसराय, सीतापुर, उत्तर प्रदेश

दुनिया में कई तरह के लोग हैं और उनका शारीरिक रूप भी अलग-अलग है। कोई छोटा है, कोई बड़ा है, कोई विकलांग है तो किसी की त्वचा का रंग अलग है। मुझे लगता है कि जो लोग शारीरिक रूप से अलग हैं उनके लिए भी दुनिया को अच्छे से जीना बहुत ज़रूरी है। उनका प्ररिप्रेक्ष्य इस दुनिया में महत्वपूर्ण है। उनके दिखने से हमें फर्क नहीं पड़ना चाहिए। शारीरिक रूप अलग होने से किसी की मानसिकता नहीं बदलती। दुख की बात है कि लोग संवेदनशील नहीं हैं। अगर लोग एक-दूसरे को समानुभूति दिखाएँ तो दुनिया मज़ेदार जगह बन जाएगी।

अगस्तया झा, चौथी, शिव नाडर स्कूल, नोएडा, उत्तर प्रदेश

हमारे पास बहुत से लोग दिखते हैं। उनमें से कुछ गंजे भी होते हैं। कुछ लोग उन्हें चिढ़ाते हैं। मुझे तब उन चिढ़ानेवालों पर बहुत गुस्सा आते हैं। मुझे तो ऐसे इन्सानों का जीवन बहुत अच्छा लगता है क्योंकि उन्हें रोज़ बाल धोने की ज़रूरत नहीं पड़ती। उन्हें तेल लगाने की भी ज़रूरत नहीं पड़ती। और सबसे नापसन्द काम मतलब बाल कटाने का तो झंझट ही नहीं होता। बाल भीगने से बीमार होने का चांस भी नहीं होता।

लौकिक म्हेत्रे, सातवीं, प्रगत शिक्षण संस्थान, फलटण, महाराष्ट्र

दुनिया में अलग-अलग तरीके के इन्सान होते हैं। कुछ लोग सादा जीवन जीना पसन्द करते हैं। कुछ लोग मॉडर्न जीवन जीना पसन्द करते हैं। इन्हीं की वजह से लोग अलग-अलग दिखते हैं यह सब की सोच पर निर्भर होता है कि कौन किस तरीके से अपना जीवन जीना चाहता है, कौन कैसे दिखना चाहता है। मेरा मानना है कि सबको अपने मन मुताबिक जीना चाहिए और मेरे ऐसा सोचने का कारण यह है कि हमारे देश में हर इन्सान को अपनी मर्ज़ी से जीवन जीने की आज़ादी है। वह किसी भी लिबास को अपना सकता है।

सादिया हुसैन, सातवीं 'डी', नर्मदा वैली इंटरनेशनल स्कूल, नर्मदापुरम, मध्य प्रदेश

चित्र पहेली

सुडोकू 95

दिए हुए बॉक्स में 1 से 9 तक के अंक भरने हैं। आसान लग रहा है ना? पर ये अंक ऐसे ही नहीं भरने हैं। अंक भरते समय तुम्हें यह ध्यान रखना है कि 1 से 9 तक के अंक एक ही पंक्ति और स्तम्भ में दोहराए ना जाएँ। साथ ही साथ, गुलाबी लाइन से बने बॉक्स में तुमको नौ डब्बे दिख रहे होंगे। ध्यान रहे कि हर गुलाबी बॉक्स में भी 1 से 9 तक के अंक दुबारा ना आएँ। कठिन भी नहीं है, करके तो देखो।

		4	2			7		8
6	9			4	7			
3	7	2	9	1		5	6	4
	6	5	3		1	8	2	
	8					9		
	3	9			2	1		
1	5			7				
		6			5			1
8					3			

बाएँ से दाएँ

ऊपर से नीचे

जवाब पेज 42 पर

थिरकती दुनिया

मुक्ता अंजल

टॉइलेट का इतिहास

विनता विश्वनाथन

दिल्ली में विश्व प्रसिद्ध सामाजिक कार्यकर्ता और सुलभ शौचालय के संस्थापक ने 1992 में एक म्यूज़ियम स्थापित किया — द सुलभ इंटरनेशनल म्यूज़ियम ऑफ टॉइलेट्स।

मज़ेदार बात यह है कि जितने भी तरह के 'टॉइलेट' हमारे इतिहास में देखने को मिलते हैं, उनमें से लगभग सभी आज भी इस्तेमाल किए जाते हैं — खुले में शौच से लेकर फ्लश वाले टॉइलेट तक।

मनुष्य के इतिहास में टॉइलेट का विकास महत्वपूर्ण है। स्वास्थ्य और टेक्नोलॉजी से जुड़ी टॉइलेट की व्यवस्था हमारे बदलते समाज के बारे में काफी चीज़ें बता सकती है।

हम जो भी खाते-पीते हैं, उसका एक हिस्सा मल-मूत्र के रूप में बाहर निकलता है। हम इन्हें कहाँ त्यागते हैं और इनका बन्दोबस्त कैसे होता है, यह हमारी सेहत के लिए बहुत महत्वपूर्ण है। मल के मामले में यह बात खास तौर पर अहम है, क्योंकि मल अगर हमारे शरीर में दोबारा प्रवेश कर जाए तो कई बीमारियाँ फैल सकती हैं। इसलिए इसे सही जगह पर त्यागना और आगे इसका सही प्रबन्ध करना सदियों से हमारे लिए एक चुनौती रहा है।

जब तक मनुष्य शिकारी-संग्रहकर्ता (hunter-gatherer) थे, ज़ाहिर है कि तब तक वे खुले में ही मल त्यागते थे। लेकिन लगभग 10,000 साल पहले जब मनुष्य ने खेती-बाड़ी शुरू की तो निश्चित रूप से यह एक समस्या बन गई होगी, खासकर बस्तियों और शहरों में जहाँ कई सारे घर आसपास होते थे। शायद इसी समय टॉइलेट बनने लगे होंगे।

हमें यह तो पता नहीं कि पहला टॉइलेट कब बना। लेकिन प्राचीन खण्डहरों और पुरातात्विक स्थलों से हमें पता चलता है कि लगभग 3000 से 3500 साल पहले टॉइलेट इस्तेमाल में आ गए थे। मेसोपोटेमिया और सिन्धु घाटी सभ्यताओं में हमें ये देखने को मिलते हैं (चित्र 1)। हड़प्पा में मिले टॉइलेट घरों के भीतर थे। इन टॉइलेट में ज़मीन में गड्ढे में मिट्टी की हौदी रखी जाती थी और बगल में लोटा, जिसे शायद मग्गे की तरह इस्तेमाल किया जाता था। हौदी में एक छेद ज़रूर होता था ताकि पानी

चित्र 1. हड़प्पा सभ्यता के लोथल में एक घर में शौच और स्नान के लिए कमरे (लगभग 3000 वर्ष पहले)।

वाला हिस्सा निकल सके। कुछ घरों में हौदी से पाइप निकलता था जिससे मल बाहर बह सकता था। कुछ लोगों का मानना है कि पाइप वाले टॉइलेट शहर की जल-निकासी व्यवस्था का हिस्सा थे। लेकिन पक्के तौर पर यह पता नहीं है कि ये पाइप सिर्फ नहाने-धोने के पानी के लिए थे या मल-मूत्र के लिए भी थे।

पिछले 2000 सालों में दुनिया भर के टॉइलेट पर नज़र डालें तो इसके कई रूप देखने को मिलते हैं। इनमें से कुछ काफी रोचक हैं। आओ इन पर नज़र डालते हैं।

सबसे प्रचलित तो शायद सोख्ता गड्ढे (soak pit) थे। कई देशों में सार्वजनिक जगहों या घरों में ऐसे गड्ढों का इस्तेमाल होता था – मिट्टी में सामान्य गड्ढे, गड्ढे में मिट्टी का बर्तन या फिर पत्थर या संगमरमर की परत वाले गड्ढे। इस आखिरी किस्म के टॉइलेट पन्द्रहवीं सदी की दिल्ली सल्तनत के शाही टॉयलेट में मिलते थे। इसी तरह के लेकिन सार्वजनिक टॉइलेट रोमन साम्राज्य के कुछ शहरों में भी बने थे। इनमें कई लोग एक साथ बैठकर शौच कर सकते थे और शायद बातचीत भी (चित्र 4)।

सोख्ता गड्ढे सूखे या गीले टॉइलेट हो सकते हैं। सूखे टॉइलेट में पानी का इस्तेमाल नहीं होता था। ऐसा शायद पानी की व्यवस्था ना होने के कारण होता था। घरों में और कुछ सार्वजनिक जगहों में गीले टॉइलेट भी होते थे जहाँ पानी की व्यवस्था होती थी। घरों में कुछ लोग पोंछने के लिए कपड़ा भी रखते थे।

सूखे हों या गीले टॉइलेट, सोख्ता गढ्ढों के भरने पर इन्हें या तो मिट्टी से बन्द किया जाता था या फिर कई जगहों पर उनमें जमा मल को खेतों में खाद के रूप में इस्तेमाल किया जाता था। टॉइलेट की सफाई के लिए कुछ लोगों को खास तौर पर रखा जाता था। मल-मूत्र को ये लोग बेचते थे या फिर शहर के बाहर किसी एक जगह फेंक देते थे। कई देशों में यह काम निचले वर्ग या जाति के लोगों से करवाया जाता था।

चित्र 2. चीन के हान राजवंश (लगभग 2000 वर्ष पहले) में सूअर टॉइलेट का नमूना।

चित्र 3. रोमन साम्राज्य (लगभग 1600 वर्ष पहले) के समय के घर में बच्चे के लिए टॉइलेट। Zde, CC BY-SA 4.0 , via Wikimedia Commons

चित्र 4. लगभग 2000 साल पुराने रोमन साम्राज्य (आज के तुर्की) में यह सार्वजनिक शौचालय पाया गया है। इसमें संगमरमर में 48 गड्ढों का इस्तेमाल हुआ था और बहते पानी का भी बन्दोबस्त था।

सूखे टॉइलेट लद्दाख जैसे पहाड़ी क्षेत्रों में बहुत पहले से इस्तेमाल में हैं। वहाँ पानी की किल्लत तो है (जिस कारण झरने में शौच के बाद धोना मना है ताकि नदी के निचले हिस्से वाले गाँवों को भी साफ पानी मिले) ही, साथ में तापमान इतना कम होता है कि आसानी से मल का अपघटन नहीं होता। इन घरों के आसपास सूखे टॉइलेट के पहले माले के फर्श में गड्ढे काफी गहरे होते हैं। दूर नीचे गिरने वाले मल-मूत्र पर मिट्टी या राख फेंकी जाती है और फिर गोबर के साथ मिलाकर इनका खाद सरीखे इस्तेमाल होता है। आज ये टॉइलेट दुनिया के कई देशों में बनाए जा रहे हैं।

एक अन्य किस्म का टॉइलेट था – सूअर टॉइलेट। कुछ दशकों पहले तक ये हमारे गाँव-शहरों में भी होते थे और शायद अब दुर्लभ हैं। ये सूअर के बाड़े के ऊपर बनाए जाते थे। इसमें टॉइलेट के लिए पहले माले के फर्श पर गड्ढा बनाया जाता था। ऊपर से जो मल गिरता था उसे पालतू सूअर खा जाते थे (चित्र 5)। यानी कि ऊपर बैठा व्यक्ति खाने के इन्तज़ार में आतुर सूअरों को देख-सुन सकता था।

चित्र 5. भारतीय सूअर टॉइलेट।

घरों में इस्तेमाल होने वाला एक टॉइलेट था – चेम्बर पॉट (चित्र 6, 7), जो आज अस्पतालों में मिलता है। चीनी मिट्टी या किसी धातु के बने इन चेम्बर पॉट में शौच करके इन्हें दरवाज़े, खिड़की या फिर बाल्कनी से सीधे गलियों में फेंक दिया जाता था। मूत्र का इस्तेमाल घर के कुछ कामों और फैक्ट्रियों में किया जाता था। कपड़ों को साफ व सफेद करने, चमड़ी कमाने इत्यादि प्रक्रियाओं के लिए मूत्र इकट्ठा किया जाता था। कुछ देशों में ये बारूद बनाने के काम भी आता था।

चित्र 5. चीन के सुई राजवंश (कुछ 1700 वर्ष पहले) में मूत्र के लिए मिट्टी का बर्तन। Gary Todd, CC0, via Wikimedia Commons

तो आधुनिक टॉयलेट कब बने? बहते पानी से बना हुआ फ्लश वाला टॉइलेट 1596 में इंग्लैंड में जॉन हैरिंगटन ने अपने घर में बनाया था। उस समय की रानी एलीज़ाबेथ-I के लिए भी यह टॉइलेट बनाया गया था। इसके बावजूद लगभग 200 सालों तक यह आम लोगों के बीच चलन में नहीं आया। अँग्रेज़ों के साथ इस आधुनिक फ्लश टॉइलेट ने भारत में प्रवेश किया।

फिलहाल टॉइलेट की चर्चा को यहीं रोकते हैं। अगली बार इससे सम्बन्धित कुछ अन्य रोचक बातें करेंगे।

चित्र 6. इंग्लैंड के घरों में इस्तेमाल हुआ चेम्बर पॉट (कुछ 1300 वर्ष पहले बना)। Wellcome Library, London CC BY 4.0, via Wikimedia Commons

चित्र 7. 1596 में जॉन हैरिंगटन द्वारा बनाया गया दुनिया का पहला बहते पानी वाला फ्लश टॉइलेट।

तुम भी बनाओ

अखबार से चप्पल

रक्षिता सैनी

जुगाड़:
पुराना अखबार, कार्डबोर्ड, झाड़ू की सींक
कैंची, फेविकोल, पेंसिल, स्केल

1. कार्डबोर्ड का एक टुकड़ा लो। उस पर अपनी चप्पल रखकर ट्रेस करो और फिर उसे काट लो। एक जोड़ी चप्पल के लिए तुम्हें ऐसे चार कट-आउट बनाने होंगे।

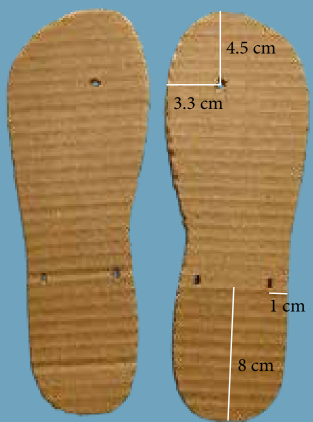

2. झाड़ू की सींक की मदद से अखबार को लपेटते हुए पतली स्ट्रॉ बना लो।

3. कार्डबोर्ड पर फेविकोल लगाकर स्ट्रॉ को आड़े में चिपकाते जाओ। पूरा कार्डबोर्ड ढँक लो और फिर स्ट्रॉ को चप्पल के आकार में काट लो।

4. यही प्रक्रिया दूसरे कार्डबोर्ड पर भी दोहराओ। पिछले कार्डबोर्ड से काटे गए स्ट्रॉ को यहाँ इस्तेमाल कर लो। ज़रूरत हो तो उन्हें फिर से लपेट लो।
अब चप्पल का बेस तैयार है। इससे तुम अलग-अलग तरह की चप्पलें बना सकते हो।

अँगूठे वाली चप्पल के लिए:
5. बेस में ऊपरी किनारे से 4.5 सेंटीमीटर और साइड से 3.3 सेंटीमीटर की दूरी पर एक छेद करो। फिर निचले किनारे से 8 सेंटीमीटर और साइड से 1-1 सेंटीमीटर की दूरी पर दोनों तरफ एक-एक चीरा लगाओ। अगर तुम्हें मोटी पट्टी चाहिए तो चीरे थोड़े लम्बे बनाना।

6. स्ट्रॉ में भी उन्हीं जगहों पर चीरा और छेद बनाओ जहाँ कार्डबोर्ड में छेद और चीरे बनाए थे।

7. अब अखबार से दो पतली मुड़ी हुई पट्टियाँ बनाओ। इनकी चौड़ाई कार्डबोर्ड के चीरे की लम्बाई पर निर्भर करेगी। एक सिरा ऊपर वाले छेद में चिपकाओ और दूसरा नीचे के किसी एक चीरे में। इसी तरह दूसरी पट्टी भी चिपका लो ताकि उल्टा V आकार बन जाए।

देखो कि तुम्हारा पैर आराम से अन्दर जा रहा है या नहीं। उसी हिसाब से पट्टियों को पीछे से चिपका लो। चाहो तो कागज़ की जगह कपड़े की पट्टियाँ भी लगा सकते हो। इससे चप्पल ज़्यादा मज़बूत बनेगी। चप्पल पहनकर थोड़ा चलकर भी देखो। अगर सब ठीक है, तो आगे बढ़ो।

8. अब दोनों बेस के पीछे अखबार की एक परत चिपकाओ। फिर उन पर बचे हुए दो कट-आउट चिपका लो।
चाहो तो अखबार की लगभग 1 सेंटीमीटर चौड़ी पट्टी मोड़कर चप्पल के किनारों पर चिपका लो, या ऐसे भी छोड़ सकते हो।

सैंडल और चौड़ी पट्टी वाली चप्पल के लिए: थोड़ा मोटा कागज़ लेकर पट्टियाँ काटो। उन्हें हल्का-सा मोड़ो और चप्पल के ऊपर चिपका लो।

सैंडल की पट्टी की चौड़ाई: 1.5 से 3 सेंटीमीटर
स्लाइडर की पट्टी की चौड़ाई: 6 से 7 सेंटीमीटर

बस, तुम्हारी चप्पल तैयार है! अब तुम इन्हें रंग, मोती या ग्लिटर से सजाकर और सुन्दर बना सकते हो।

भाग - 20

मेहमान जो कभी गए ही नहीं

अन्य देश से आए और हमारे देश में सफलता से बसे हुए आक्रामक पौधों की सीरिज़ की अगली कड़ी...

आर एस रेश्नू राज, ए पी माधवन, टी आर शंकर रमन,
दिव्या मुडप्पा, अनीता वर्गीस और अंकिला जे हिरेमथ
रूपान्तरण व अनुवाद: विनता विश्वनाथन

चित्र: रवि जाम्भेकर

सिकल सेना
(Sickle Senna)

वैज्ञानिक नाम: *सेना टोरा / Senna tora*

मूल: उष्ण कटिबन्धीय अमेरिका

कैसे पहुँचा:
इस बारे में कोई स्पष्ट जानकारी उपलब्ध नहीं है।

यह एक छोटी झाड़ी है। साल भर में इसका पौधा सूख जाता है और फिर नया पौधा उगता है। यह पौधा लगभग 1 मीटर की ऊँचाई तक बढ़ सकता है। इसके पत्ते लगभग 15 सेंटीमीटर लम्बे होते हैं। इनमें 2-4 जोड़े छोटे पत्रक (leaflet) होते हैं। ये पत्रक अण्डाकार होते हैं और नीचे की ओर पतले होते जाते हैं। पत्तियों की निचली सतह पर छोटे-छोटे मुलायम रोएँ होते हैं। जहाँ पत्ती डंठल से जुड़ती है वहाँ छोटी पत्ती जैसी संरचना (stipules) होती है। इसके फूल लगभग 1.5 सेंटीमीटर चौड़े और पीले रंग के होते हैं। ये पत्तियों के बगल से छोटे-छोटे गुच्छों में खिलते हैं। इसकी फलियाँ 8-14 सेंटीमीटर लम्बी होती हैं। एक पौधे से लगभग 640 बीज पैदा होते हैं। ये बीज भूरे रंग के होते हैं (जो मेथी दाने जैसे दिखते हैं) और पानी व जानवरों के ज़रिए फैलते हैं।

असर

सिकल सेना का पौधा तेज़ी से फैल सकता है। इसका एलीलो-पैथिक असर होता है। यानी यह ऐसे रसायन उत्पन्न करता है जो आसपास उगने वाले अन्य पौधों को बढ़ने से रोकता है। इसका उपयोग प्राकृतिक कीटनाशक और फफूँद-नाशक के रूप में भी किया जाता है। इसके बीज कभी-कभी कॉफी के विकल्प के रूप में भी काम आते हैं।

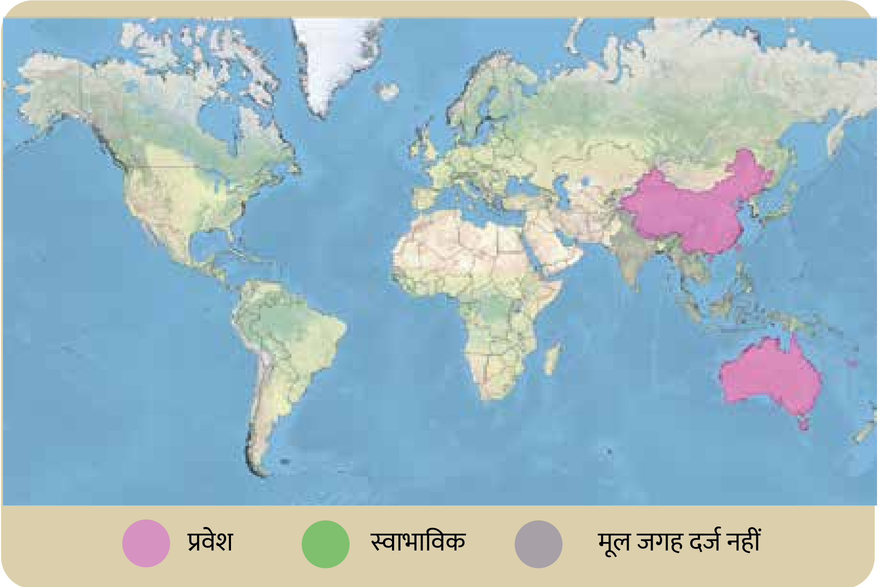

हालाँकि CABI (2023) से प्राप्त नक्शे में दिखाया नहीं गया है, लेकिन प्रायद्वीपीय भारत में सिकल सेना को एक आक्रामक एलियन पौधे के तौर पर जाना जाता है।

बन्दोबस्त

जब पौधे छोटे हों, तभी उन्हें जड़ से उखाड़ देना इसे नियंत्रित करने का सबसे कारगर तरीका है।

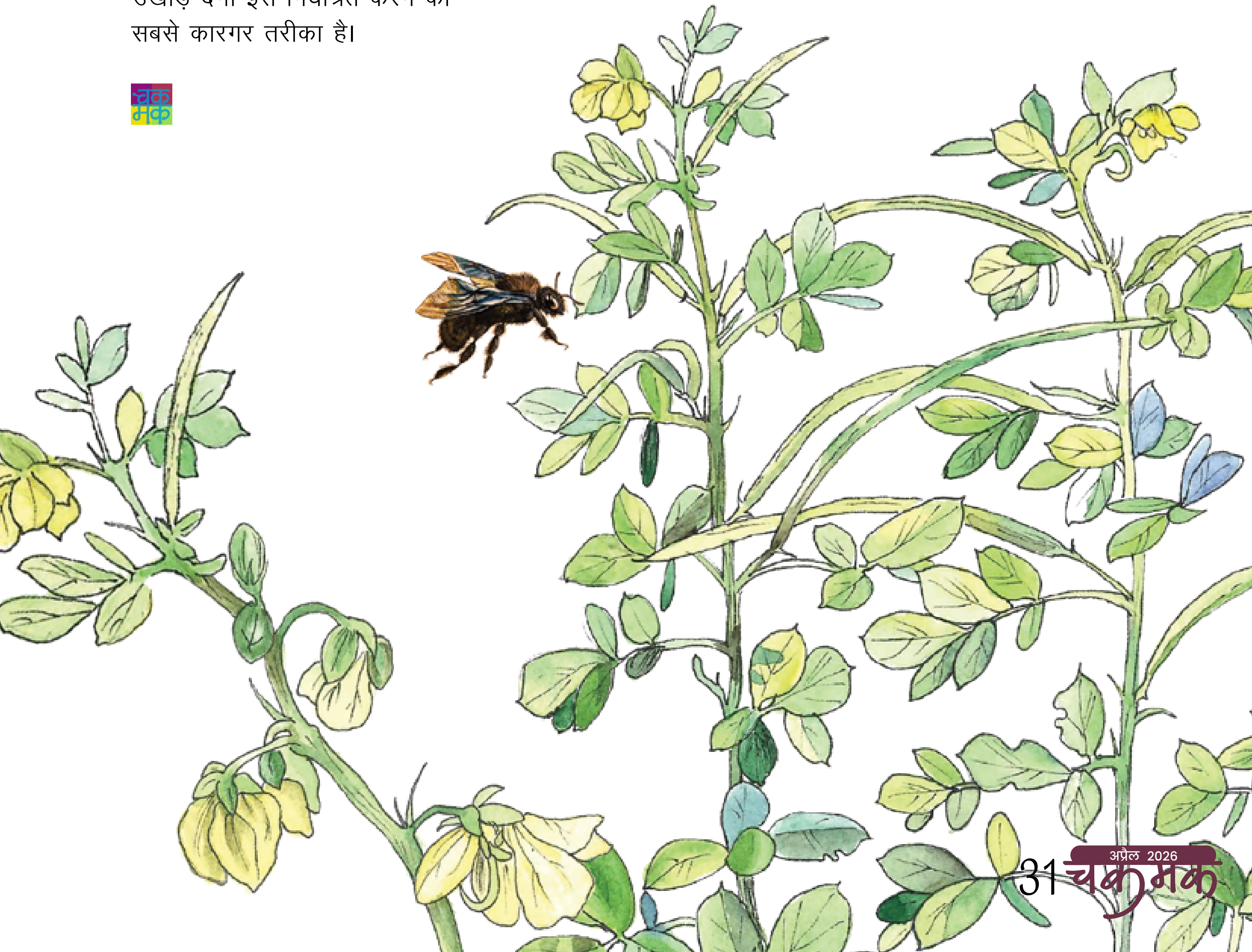

एक्सरसाइज़ और मस्तिष्क

एक्सरसाइज़ का नाम सुनते ही क्या ख्याल आता है? मज़बूत मसल्स, स्वस्थ दिल, स्वस्थ फेफड़े यानी तन्दुरुस्त शरीर। और यदि कहा जाए कि शरीर की इस तन्दुरुस्ती में मस्तिष्क भी शामिल है, तो?

एक हालिया अध्ययन में बताया गया है कि एक्सरसाइज़ से मस्तिष्क की वायरिंग मज़बूत होती है। इससे कुछ न्यूरॉन फटाफट सक्रिय हो जाते हैं। इससे हमें यह बात समझ आती है कि लगातार एक्सरसाइज़ से एक्सरसाइज़ करने में होने वाली आसानी और बेहतर क्षमता (एक्सरसाइज़ सहनशीलता) में मस्तिष्क सक्रिय रूप से शामिल होता है। फिलहाल यह निष्कर्ष चूहों पर हुए अध्ययन के आधार पर है। हो सकता है कि ऐसा मनुष्यों में भी होता हो लेकिन पहले इसे परखना होगा।

अमेरिका के कुछ वैज्ञानिक यह जानना चाहते थे कि जब लोग एक्सरसाइज़ करते हैं तो मस्तिष्क में क्या होता है। असल में पूर्व अध्ययन में ऐसा पाया गया था कि स्टेरॉयडोजेनिक फैक्टर-1 (SF1) नामक प्रोटीन को कोड करने के लिए ज़िम्मेदार जीन को ठप करने से चूहों में एक्सरसाइज़ सहनशीलता कम हो जाती है। इसलिए शोधकर्ताओं ने मस्तिष्क के उस हाइपोथैलेमस के उन न्यूरॉन समूहों की निगरानी करना तय किया जो SF1 नामक प्रोटीन बनाते हैं। हाइपोथैलेमस भूख और ब्लड सुगर को नियंत्रित करने के लिए ज़िम्मेदार होता है, और SF1 प्रोटीन चयापचय क्रिया को नियंत्रित करने में भूमिका निभाता है।

शोधकर्ताओं ने चूहों को ट्रेडमिल पर दौड़ाया और उनमें SF1 न्यूरॉन्स की गतिविधि देखी। उन्होंने पाया कि ये न्यूरॉन एक्सरसाइज़ करने से सक्रिय हो गए थे। लेकिन और भी दिलचस्प बात उन्हें यह पता चली कि SF1 न्यूरॉन का एक समूह एक्सरसाइज़ खत्म होने के बाद ही सक्रिय होता है। कई एक्सरसाइज़ सत्रों के बाद चूहों में सक्रिय होने वाले

न्यूरॉन की संख्या और उनकी सक्रियता की मात्रा में भी बढ़ोतरी देखी गई।

शोधकर्ताओं ने तीन हफ्तों तक लगातार नियमित एक्सरसाइज़ करने वाले चूहों की मस्तिष्क गतिविधि की तुलना उन चूहों की मस्तिष्क गतिविधि से की जिन्होंने एक्सरसाइज़ करने में नागा किया था। उन्होंने पाया कि दोनों समूह के चूहों के SF1 न्यूरॉन्स के विद्युतीय गुणों में अन्तर था। नियमित एक्सरसाइज़ करने वाले चूहों में न्यूरॉन को सक्रिय करना आसान हो गया था। साथ ही न्यूरॉन के बीच कनेक्शन्स (सायनेप्स) की संख्या भी दुगनी हो गई थी। अनुमान है कि शायद मनुष्यों में भी ऐसा कुछ होता होगा, लेकिन इसे परखकर देखना ज़रूरी है। आखिरकार यह तो देखा ही गया है कि मनुष्यों में भी एक्सरसाइज़ शुरू करने के बाद कुछ दिन थोड़ा तकलीफदेह गुज़रते हैं, लेकिन दिन ब दिन आसानी होने लगती है।

स्रोत फीचर्स से साभार

माथापच्ची

फटाफट बताओ

क्या है जो उलटा करने
पर कम हो जाता है?

(6 संख्या)

क्या है जो पोंछने से
गीला हो जाता है?

(तौलिया)

20 सन्तरों को 11 बच्चों में
बराबर-बराबर बाँटना है।
कैसे करोगे?

(जूस बनाकर)

अन्त कटे तो कदम रखे
मध्य कटे डर जाऊँ
खुद भले न चल सकूँ
मगर राही को मंज़िल पहुँचाऊँ

(सड़क)

खड़ा द्वार पर ऐसा घोड़ा
जिसने चाहा पेट मरोड़ा

(लगाम)

सीधा होऊँ तो खाया जाऊँ,
उलटा होकर नाच दिखाऊँ

(चना)

आँख में मेरी उँगली डालो
मुँह तभी मैं खोलूँ
कपड़ा, कागज़ सब खा जाऊँ
नाम मेरा अब बोलो

(कैंची)

1. केवल 1 गेंद को इधर-उधर करके इस क्रम को उलट देना है यानी 4, 3, 2, 1 के क्रम में करना है। कैसे करोगे

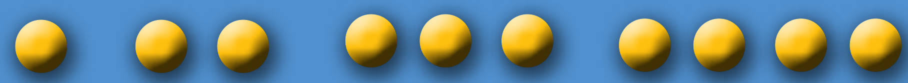

2. कौन-सा ब्लॉक लाल ब्लॉक के ठीक नीचे और भूरे ब्लॉक के ठीक बाईं ओर है?

3. 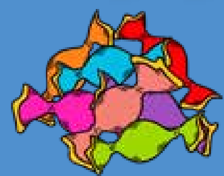

जैस्मीन 1 रुपए में 1 टॉफी खरीदती है। दुकानदार ने एक ऑफर रखा है — अगर वह 3 खाली रैपर वापस करेगी, तो उसे 1 टॉफी मुफ्त मिलेगी। जैस्मीन के पास 15 रुपए हैं। बताओ उसे कुल कितनी टॉफियाँ मिलेंगी?

4. दी गई ग्रिड की हर पंक्ति व हर कॉलम में अलग-अलग बिल्ली आनी चाहिए। इस शर्त के आधार पर खाली जगहों में कौन-सी बिल्लियाँ आएँगी?

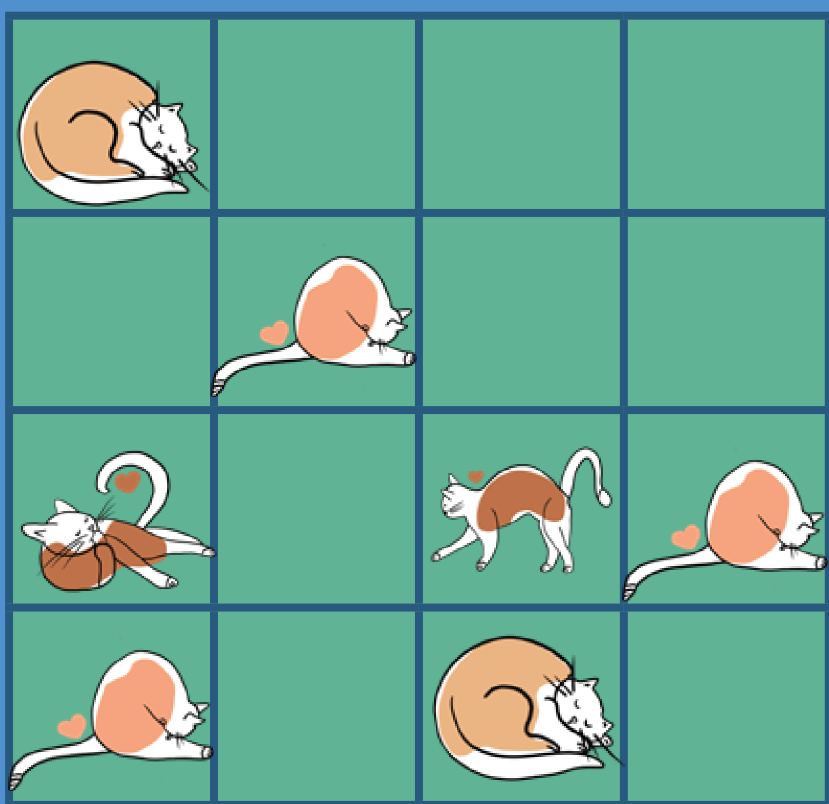

5\. तीन तीलियों को इधर-उधर करके तुम्हें सिक्के को घर के अन्दर करना है। बस ध्यान रखना कि घर की आकृति हूबहू ऐसी ही होनी चाहिए।

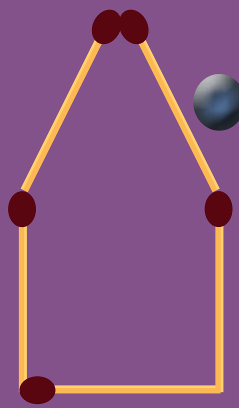

6\. माही अपनी माँ के साथ बाज़ार गई। दुकानदार ने उससे तीन सवाल किए:

- सुबह तुमने नास्ते में क्या खाया?
- तुम्हारे पापा क्या काम करते हैं?
- तुम्हें क्या सामान चाहिए?

बच्ची ने तीनों सवालों का एक ही जवाब दिया। बताओ क्या?

7\. समीर का कहना है कि वो लाल रंग की स्याही से नीला लिख सकता है। वह झूठ नहीं बोल रहा। पर ऐसा कैसे हो सकता है?

8\. इस चित्र में तुम्हें कितने त्रिभुज दिखाई दे रहे हैं

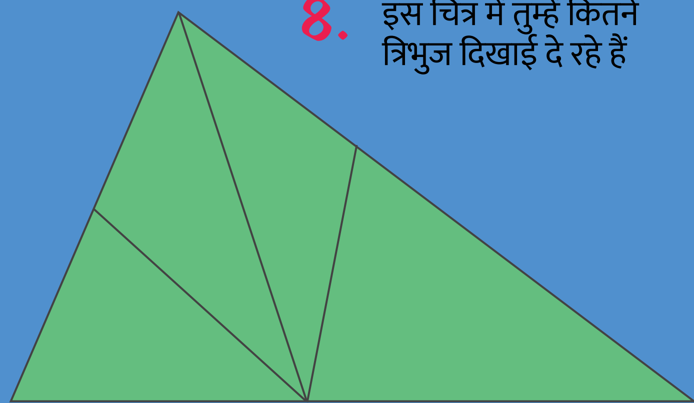

9\. दो चटाइयों पर कुछ बिल्लियाँ बैठी हैं। एक चटाई पर बैठी बिल्ली दूसरी चटाई पर बैठी बिल्ली से कहती है कि यदि तुम में से एक बिल्ली हमारी चटाई पर आ जाए तो दोनों चटाइयों पर बराबर बिल्लियाँ हो जाएँगी। दूसरी चटाई पर बैठी बिल्ली कहती है कि यदि तुम में से एक बिल्ली हमारी चटाई पर आ जाए तो हम तुम से दुगुनी हो जाएँगी। बताओ दोनों चटाइयों पर कितनी बिल्लियाँ बैठी थीं?

10\. दी गई ग्रिड में कई सारी फिल्मों के नाम छिपे हुए हैं। तुमने कितने ढूँढे?

ड	बा	ला	प	ता	ले	डी	ज़	दं
मि	र	मू	ध	बी	हि	च	की	ग
श	ह	ल	गा	न	इ	क	बा	ल
न	वीं	ब	पा	सु	क	दे	ड़ी	स्व
मं	फे	जू	र्फी	प	मा	इं	कि	दे
ग	ल	मि	स्ट	र	इं	डि	या	श
ल	भू	त	ना	थ	गू	या	ल	पा
चि	ल्ल	र	पा	र्टी	म	क	ड़ी	क्ष्य
पी	ला	ना	ध	न	क	स	वा	पा

जवाब पेज 42 पर

मेरा पन्ना

नीले रंग का पक्षी

अलमता कुरैशी
पाँचवीं
सांदीपनी विद्यालय प्राथमिक विभाग
सागर, मध्य प्रदेश

जब हम जंगल जा रहे थे तो रास्ते के किनारे खम्बों पर लगे तार पर हमें एक नीले रंग का पक्षी दिखा। सभी बच्चों ने सर को ज़ोर-से चिल्लाकर कहा, "सर, देखो पक्षी।" कुछ बच्चे उसे नीलकंठ कह रहे थे। कुछ सर-मैडम भी नीलकंठ बता रहे थे। लेकिन रामेश्वर सर बोले, "इसे पास से देखना पड़ेगा।" हम चुपके-चुपके उसके पास तक गए। फिर सर ने बताया कि यह किलकिला है। इसकी चोंच नीलकंठ से बड़ी होती है। इससे यह जल्दी मछली पकड़ लेता है। सर ने बताया कि यह कई रंग का होता है।

चित्र: मानसी कुमरे, ईएमआरएस चामोर्शी, गढ़चिरौली, नागपुर, महाराष्ट्र (स्लम आउट लाउड संस्था से प्राप्त)

जुनैद का सपना

जुनैद
पहली, शासकीय माध्यमिक विद्यालय
गुलझरा, धामनोद, धार, मध्य प्रदेश

एक दिन जुनैद सपना देख रहा था। सपने में उसने एक बादल देखा। बादल उसके पास आया और दोस्ती की। बादल ने उसको आसमान की सैर कराई। बादल ने जुनैद को अपने दोस्तों से मिलवाया। फिर सभी मज़े करने लगे और बारिश होने लगी। फिर सभी चाँद के पास गए और उससे बोले, "बारिश हो रही है। चलो, अपन खेलते हैं।" वो जब खेल रहे थे तभी तारे आए और पूछा, "तुम लोग क्या कर रहे हो?" फिर सभी ने बोला, "हम खेल रहे हैं। तुम भी खेलो।" फिर सब मिलकर मज़े से खेलने लगे और दोस्त बन गए।

चित्र: अंकिता कुमारी, आठवीं, परिवर्तन सेंटर, ग्राम नारायणपुर, सिवान, बिहार

मेरी दादी की यादें

रोशन कुमार राम
पाँचवीं, कथा कानन लाइब्रेरी
एवं संसाधन केन्द्र
नगांव, असम

मेरा एक पेड़ था। मैं उस पर चढ़ गया तो पेड़ से पानी में गिर पड़ा। तो मेरे फूआ के बेटे ने मुझे पानी से बाहर निकाला। फिर मैं दादी के पास गया, तो मेरी दादी सो रही थीं। तो मैं वहाँ से चला गया। उसके बाद मैं फिर से पेड़ पर चढ़ा। तो मेरे भैया ने देख लिया। तो मैं पेड़ से उतर गया। और मैं घर गया तो भैया ने मुझे फँसा दिया और कहा, "दादी, रोशन फिर पेड़ पर चढ़ा था।" तो मेरी दादी बोलीं, "तुम पेड़ पर कभी मत चढ़ना।" दादी यह बोलकर खाना खाने लगीं। उसके बाद हम भी खाने लगे। उसके बाद दादी खाकर सोने चली गईं। रात के ग्यारह बजे उनकी मृत्यु हो गई। मुझे बहुत दुख हुआ और मैंने सोच लिया कि कि अब से मैं पेड़ पर कभी नहीं चढ़ूँगा।

मेरा पन्ना

थंब गर्ल

आध्या सिंह
जूनियर केजी, किडजी स्कॉलर वर्ल्ड
बुलन्दशहर, उत्तर प्रदेश

मेरी प्यारी बहन अविशी 3 साल की है। वह अभी बोतल से दूध पीती है। वह थोड़ा-सा दूध पीती है। उसके बाद अपना अँगूठा चूसने लगती है। जब उसे अँगूठा चूसने के लिए हम मना करते हैं तो वह बोलती है कि मेरे अँगूठे में से दूध निकलता है। अँगूठा चूसने की वजह से उसके दाँत टेढ़े-मेढ़े हो गए हैं। उसे मेरे पापा प्यार से 'थंब गर्ल' बोलते हैं।

बड़े मज़े तब आते हैं

अभी पार्की
पाँचवीं, राजकीय प्राथमिक शाला
कनालीछीना, पिथौरागढ़, उत्तराखण्ड

छड़नदेव हम जाते हैं
आइसक्रीम हम उड़ाते हैं
बड़े मज़े तब आते हैं
खेलने का मैदान गरम
लू को आती नहीं शरम
कहीं चैन ना पाते हैं
मन ही मन झुँझलाते हैं

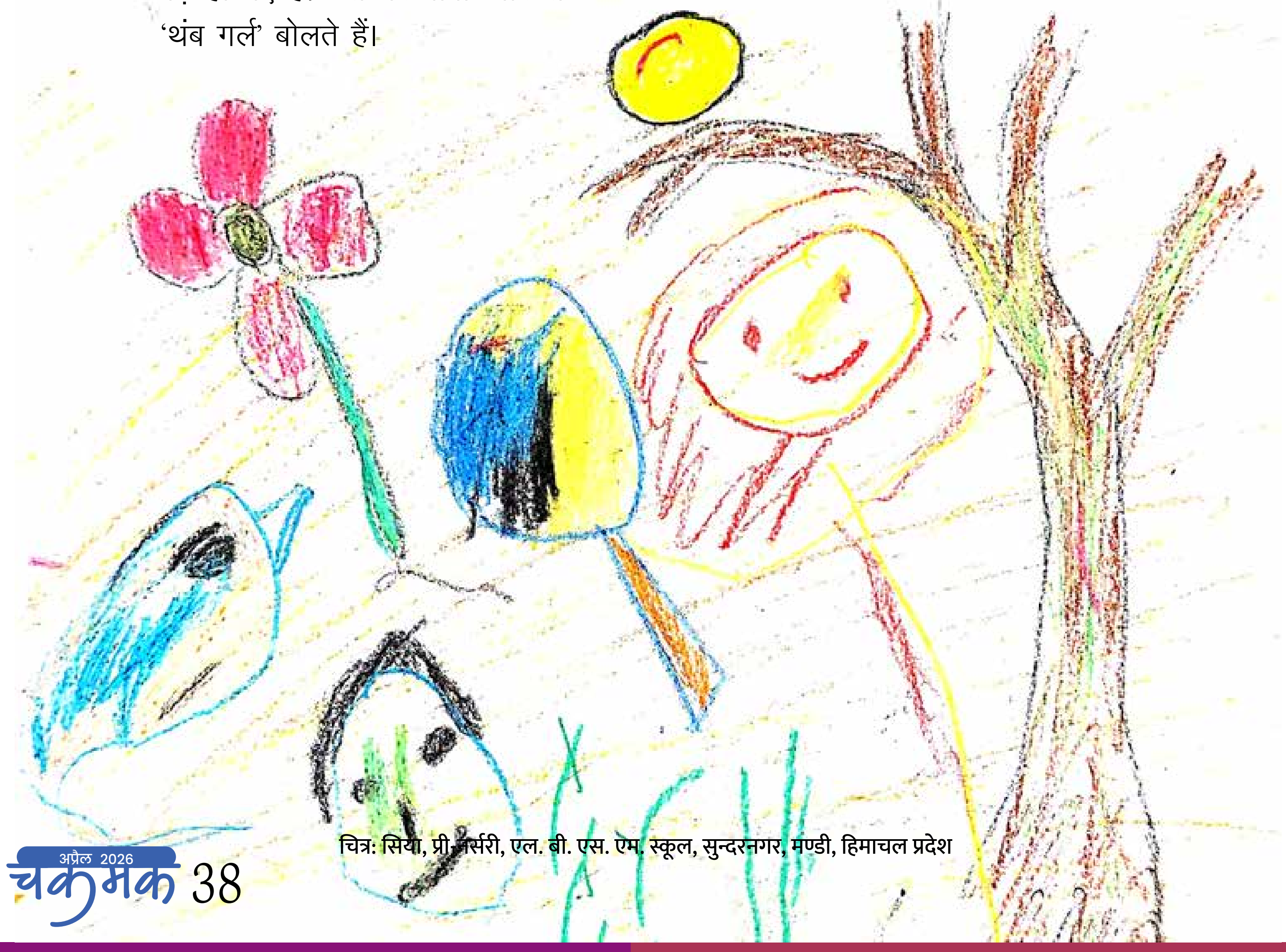

चित्र: सिया, प्री-नर्सरी, एल. बी. एस. एम. स्कूल, सुन्दरनगर, मण्डी, हिमाचल प्रदेश

मेरी मम्मा

काशी पाटीदार
पहली, सांदीपनि एकैडमी, मंडलेश्वर
खरगौन, मध्य प्रदेश

स्कूल से आते समय बस में सारे बच्चे मुझे चिढ़ा रहे थे। मेरी पक्की दोस्त भी मुझे चिढ़ा रही थी। फिर मैंने दीदी से मदद माँगी। फिर भी दीदी ने नहीं सुना। मुझे बहुत बुरा लगा। फिर मैंने घर आकर मम्मा को बताया। तो मम्मा ने समझाया कि जो स्ट्रॉन्ग होते हैं, उनको बुरा नहीं लगता।

चित्र: देविका सगुने, पहली, शिक्षा प्रोत्साहन केन्द्र, खारी, धरणी, महाराष्ट्र

मेरे पापा

आँचल
पाँचवीं
प्राथमिक विद्यालय
धर्मपुर, बलरामपुर,
उत्तर प्रदेश

मेरे पापा किराने की दुकान पर नौकरी करते हैं। वो दस बजे काम पर जाते हैं और रात को दस-ग्यारह बजे तक घर जाते हैं। कभी-कभी शाम को छुट्टी मिलती है तो खाना खाने आते हैं। हम लोग सुबह ही अपने पापा को गिनती-पहाड़ा सुनाते हैं। वो सुबह एक घण्टा हम लोग को पढ़ाते हैं। हम लोगों को रोज़ पाँच-पाँच रुपए मिलते हैं। हम लोग उस पैसे को गुल्लक में इकट्ठा करते हैं।

रविवार को दुकान की छुट्टी होती है। उस दिन पापा सुबह पोखरे पर जाकर वहाँ से मिट्टी लाते हैं, जिससे घर लीपा जाता है। इसलिए रविवार को हम लोग सुबह नहीं पढ़ते। कभी-कभी मैं भी पापा के साथ साइकिल पर बैठकर पोखरे पर जाती हूँ। आजकल पापा मुझे साइकिल चलाना सिखा रहे हैं। कभी-कभी दुकान मालिक रविवार को भी काम पर बुला लेते हैं। तब पापा को जाना पड़ता है। इससे मैं उदास हो जाती हूँ।

मेरा रंग भरा कपड़ा

सत्यम उइके
छठवीं, एकलव्य फाउंडेशन, ग्राम कोटमीमाल
केसला, नर्मदापुरम, मध्य प्रदेश

हम एक दिन बाज़ार गए थे। मम्मी ने कहा, “वो मेरे लिए अच्छा कपड़ा लेंगी।” मम्मी ने फिर मेरे लिए एक रंग भरा कपड़ा लिया। फिर मुझे उस कपड़े को दिखाया। मैंने उसे देखकर पहन लिया था। फिर मम्मी ने कहा, “कपड़ा गन्दा हो जाएगा।” तो मैंने कहा, “मैं इसे धुल दूँगा।” मम्मी ने कहा, “अच्छे से धुलना, ठीक है।” मैंने उसे धुलकर खापड़े पर डाल दिया। सुबह उठकर देखा तो उसे चूहे ने कतर दिया। फिर मैं उसे देखकर बहुत रोया। फिर मैंने मम्मी को बताया तो उन्होंने कहा, “उसे मुझे दे दो।” और फिर मम्मी ने उसे फाड़कर कढ़ाई उतारने वाला कपड़ा बना दिया। मुझे बहुत बुरा लगा।

चित्र: जानवी उइके, पाँच साल, आँगनवाड़ी, रसलपाटा, केसला, नर्मदापुरम, मध्य प्रदेश

चित्र: सचिन सिलावट, केजी वन, ज्ञान दर्शन स्कूल, भोपाल, मध्य प्रदेश

चित्र: वंश, तीसरी, ज्ञान दर्शन स्कूल, भोपाल, मध्य प्रदेश

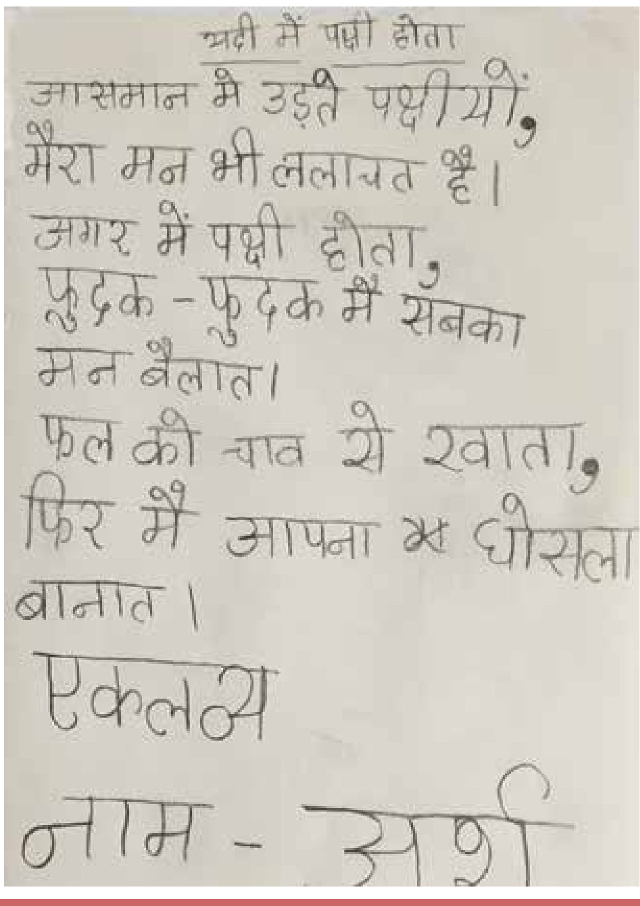

अगर मैं पक्षी होता

आसमान मे उड़ते पक्षीयों,
मैरा मन भी ललाचत है।
अगर मैं पक्षी होता,
फुदक - फुदक मैं सबका
मन बैलात।
फल की चाव से खाता,
फिर मैं आपना ~~x~~ घोसला
बानात।
एकलव्य
नाम - अर्श

चित्र: अर्श यशोदा भगत, एकलव्य फाउंडेशन, भोपाल, मध्य प्रदेश

चित्र: वीरा गोरे, पाँचवीं, प्रगत शिक्षण संस्थान, फलटण, सतारा, महाराष्ट्र

माथापच्ची

जवाब

1. सैकेंड लास्ट गेंद को उठाकर पहली वाली गेंद के बगल में रख दो।

2. नीला

3. 1 रुपए की 1 टॉफी है तो 15 रुपए में 15 टॉफियाँ मिलेंगी। 3 रैपर देने पर 1 टॉफी मिलेगी तो 15 रैपर देने पर 5 टॉफी और मिल जाएँगी। अब इनमें से 3 रैपर देने पर 1 टॉफी और मिल जाएगी। दो रेपर पहले के बचे हैं और अब इस नई टॉफी के रैपर को मिलाकर देने पर एक और टॉफी मिल जाएगी। तो कुल टॉफी हुईं: 15 + 5 + 1 + 1 = 22

5.

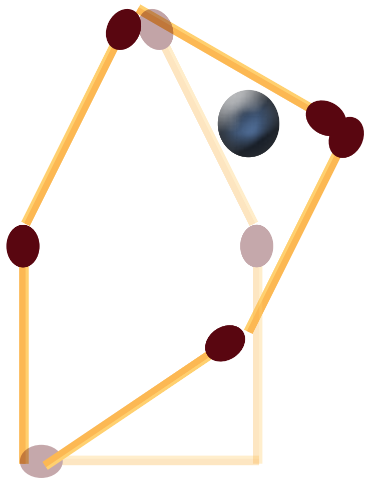

6. कुछ नहीं।

7. उसने ऐसे लिखा: नीला

8. 7 त्रिभुज

9. पहली चटाई पर 5 व दूसरी पर 7 बिल्लियाँ बैठी हैं।

10.

ड	बा	ला	प	ता	ले	डी	ज़	दं
मि	र	मू	ध	बी	हि	च	की	ग
श	ह	ल	गा	न	इ	क	बा	ल
न	वीं	ब	पा	सु	क	दे	ड़ी	स्व
मं	फे	जू	फ्री	प	मा	इं	कि	दे
ग	ल	मि	स्ट	र	इं	डि	या	श
ल	भू	त	ना	थ	गू	या	ल	पा
चि	ल्ल	र	पा	टीं	म	क	ड़ी	क्ष्य
पी	ला	ना	ध	न	क	स	वा	पा

4.

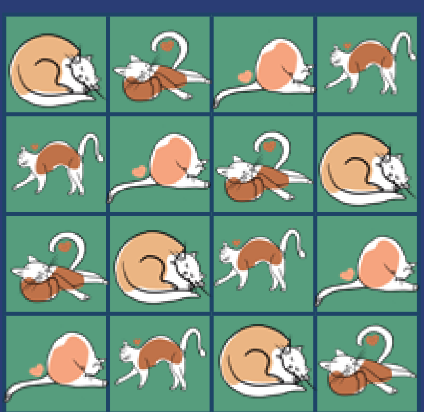

इस अंक की चित्रपहेली का जवाब

सुडोकू-95 का जवाब

5	1	4	2	3	6	7	9	8
6	9	8	5	4	7	2	1	3
3	7	2	9	1	8	5	6	4
4	6	5	3	9	1	8	2	7
2	8	1	7	5	4	9	3	6
7	3	9	8	6	2	1	4	5
1	5	3	6	7	9	4	8	2
9	2	6	4	8	5	3	7	1
8	4	7	1	2	3	6	5	9

पिछले कुछ महीनों में अँग्रेज़ी का एक शब्द दुनिया भर में बहुत तेज़ी से फैल गया है। ये है 6 7 या सिक्स सेवन। अमेरिका में एक रैपर के गाने में इसका पहली बार ज़िक्र हुआ। इसके बाद कुछ मशहूर खिलाड़ी अपने इन्टरव्यू में इसका इस्तेमाल करने लगे और इस तरह यह फैलता गया। आज भारत के बच्चे भी इसका इस्तेमाल करने लगे हैं। इसका मतलब 'सो-सो' या 'शायद' हो सकता है। दिलचस्प बात यह है कि ज़्यादातर लोग इसका इस्तेमाल अस्पष्ट ढंग से करते हैं। खासकर बच्चे किसी भी सवाल के जवाब में इसका उपयोग कर देते हैं। इस बात से कई टीचर चिढ़ने लगे हैं। सिक्स सेवन का इस तरह लोकप्रिय होना डिजिटल रुझान की रफ्तार का एक उदाहरण है।

चॉकलेट की कमी

दुनिया के 70 प्रतिशत कोको की खेती अफ्रीकी देशों में होती है। लेकिन कुछ समय से अफ्रीका में कोको, की फसल कम होती जा रही है और इसकी माँग बढ़ती जा रही है। रोग, जलवायु परिवर्तन और बूढ़े होते पेड़ इसका कारण हैं। इसका नतीज़ा ये हो सकता है कि कुछ सालों में हमें चॉकलेट की घोर कमी का सामना करना पड़े, क्योंकि कोको से ही तो चॉकलेट बनती है। वैसे अभी से कोको के दाम बढ़ने लगे हैं। इस चुनौती का सामना करने के लिए खेती के नए तरीकों, नए इलाकों में कोको की खेती जैसे उपायों की ज़रूरत है। वैसे तो चॉकलेट को ज़्यादातर लोग अनिवार्य आहार नहीं मानते हैं, लेकिन अगर यह हमारी जेब पर भारी पड़ने लगी तो हम में से कई के लिए यह त्रासदी जैसा होगा।

RNI क्र. 50309/85 डाक पंजीयन क्र. म. प्र./भोपाल/261/2021-23

कौआ

डॉ. हर्षवर्धन कुमार
चित्र: शुभम लखेरा

कूद-कूदकर छज्जे से
ध्यान बँटाकर अच्छे से
ले गया रोटी बच्चे से

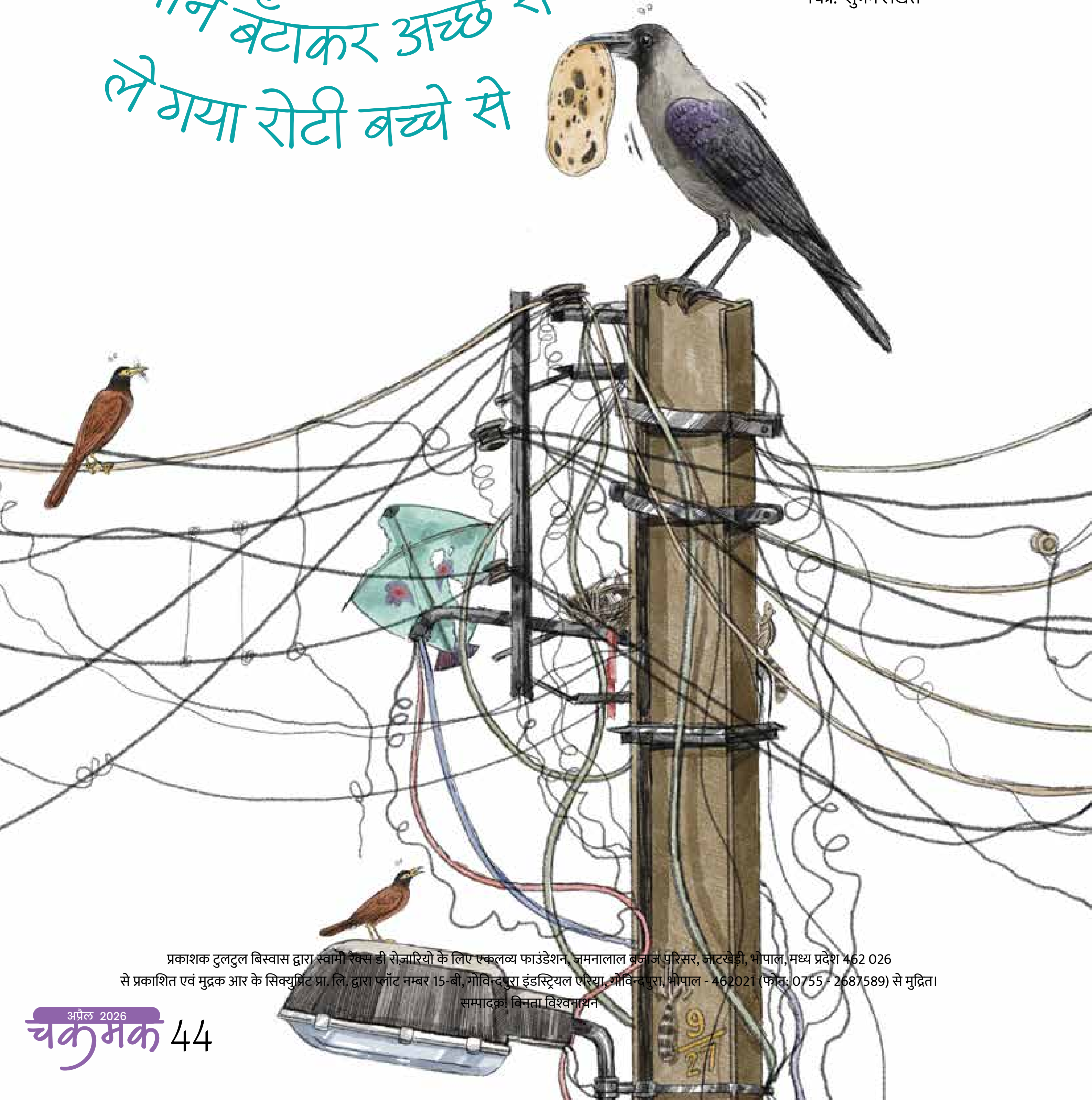

प्रकाशक टुलटुल बिस्वास द्वारा स्वामी रैक्स डी रोज़ारियो के लिए एकलव्य फाउंडेशन, जमनालाल बजाज परिसर, जाटखेड़ी, भोपाल, मध्य प्रदेश 462 026
से प्रकाशित एवं मुद्रक आर के सिक्युप्रिंट प्रा. लि. द्वारा प्लॉट नम्बर 15-बी, गोविन्दपुरा इंडस्ट्रियल एरिया, गोविन्दपुरा, भोपाल - 462021 (फोन: 0755 - 2687589) से मुद्रित।
सम्पादक: विनता विश्वनाथन